www.thearyasamaj.org

ओ३म्

संश्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधिषि
परोपकारिणी

पाक्षिक परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वर्ष - ५४ अंक - २२ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र नवम्बर (द्वितीय) २०१३

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

www.thearyasamaj.org

योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर) में प्रथम स्तर
व उच्च प्रथम स्तर प्राप्त शिविरार्थीगण।

परीक्षा देते हुए शिविरार्थीगण।

www.thearyasamaj.org

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५४ अंक : २२
दयानन्दाब्द: १८९
विक्रम संवत्: कार्तिक शुक्ल, २०७०
कलि संवत्: ५११४
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११४

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९/५९

परोपकारी

नवम्बर द्वितीय २०१३

अनुक्रम

१. न्याय की शव यात्रा	सम्पादकीय	०४
२. आत्मा को पहचानो	स्वामी विष्वङ्	०७
३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	०९
४. महर्षि दयानन्द सरस्वती की दृष्टि....	विरजानन्द दैवकरणि	१७
५. पं. युधिष्ठिर मीमांसक का वंश.... ..	डॉ. सुजीता शर्मा	२२
६. मृत्युञ्जय	रमेश मुनि	२५
७. ''प्राचीन-भारतीय-संस्कृतीयम्''.....	डॉ. प्रशस्यमित्र	२७
८. मन की शान्ति के लिए	सुधा सावन्त	२९
९. स्पष्टवादिता-व्यवहार का मुख्य अंग	सुकामा आर्या	३०
१०. पाखण्ड-खण्डन-आज की.....	प्रताप कुमार	३१
११. चाहो सफल गृहस्थ तो.....	आचार्य दार्शनेय	३२
१२. जिज्ञासा समाधान-५१	आचार्य सोमदेव	३७
१३. संस्था-समाचार		३९
१४. आर्यजगत् के समाचार		४१

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

www.thearyasamaj.org

साम्प्रदायिक दंगा विरोधी विधेयक-
न्याय की शव यात्रा

अपने देश में बहुत पुरानी कहावत है, राजा कहे सो कानून। आजकल राजे-महाराजों का युग नहीं है, परन्तु भारत सरकार का साम्प्रदायिक दंगा विरोधी बिल यह प्रमाणित करता है कि भारत की सरकार राजे-महाराजाओं की मानसिकता से ही न्याय करने में विश्वास करती है। पंजाब के इतिहास में एक राजा के न्याय करने की प्रक्रिया का वर्णन है। राजा जब कभी दौरों पर जाता था तो उसके कार्यालयों को आदेश था कि सारी शिकायतें, प्रार्थना-पत्र दो बोरों में बराबर-बराबर भर के रख दी जायें। राजा जब आते थे तो एक बोरी पर लात मारकर कहते- ये मंजूर और दूसरी बोरी पर लात मार कर कहते- ये नामंजूर। आप क्या कर सकते हैं? न्याय तो हो गया। वैसा ही यह साम्प्रदायिक दंगा विरोधी प्रस्तावित कानून है।

इस देश में सरकार ने कुछ परिभाषायें गढ़ ली हैं। जो कांग्रेसी और साम्यवादी कह देते हैं, वह धर्म निरपेक्ष होता है तथा जो भाजपा शिवसेना वाले कहते हैं वह घोर साम्प्रदायिक होता है। प्रश्न यह नहीं है कि कहा क्या गया है? प्रश्न है- कहने वाला कौन है? यहाँ की सरकार का एक निर्णय है, उसने जिसे अपराधी कह दिया, वह अपराधी है, सदा से अपराधी है। उसके किये पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। इससे भी ऊँची बात यह है कि जिस प्रकार अपराधी निश्चित है उसी प्रकार निरपराधी भी घोषित है, वह कुछ भी करने के लिए स्वतन्त्र है, परन्तु न्याय उसके कार्यों के औचित्य पर विचार नहीं कर सकता। क्योंकि यह वर्ग कभी अपराध करता ही नहीं है। अपराध करने वाले और न करने वालों को इस कानून में एक ग्रुप की संज्ञा दी गई है। ग्रुप की व्याख्या में उसे अल्पसंख्यक कहा गया। जो अपराध करने का आदी है उसे साम्प्रदायिक कहा है, दुर्भाग्य से इस देश में वह बहुसंख्यक है। इस प्रकार सरकारी व्यवहार ने यह परिभाषा घोषित कर दी है कि बहुसंख्यक हिन्दू अपराधी है और अल्पसंख्यक कहा जाने वाला मुसलमान पीड़ित और निरपराध है। इसी मानदण्ड पर इस कानून की रचना की गई है।

इस देश के संविधान में विचित्र बात है, वहाँ धारा २९ में अल्पसंख्यक शब्द का उल्लेख है। इसमें धर्म, नस्ल, जाति और भाषा का आधार दिया है। जबकि धारा ३० में अल्पसंख्यक होने में धर्म और भाषा का ही उल्लेख किया गया है। इसमें अल्पसंख्यक को सुविधा व अधिकार की चर्चा है, परन्तु हम भूल जाते हैं कि अल्पसंख्यक शब्द सापेक्ष है बहुसंख्यक के बिना अल्पसंख्यक का अस्तित्व ही नहीं बनता, परन्तु संविधान में बहुसंख्यक को बिना परिभाषित किये छोड़ दिया गया है। इस तरह ये सरकार इस देश को अल्पसंख्यकों का देश मानती है और साधन सुविधाओं पर घोषित रूप से उनको पहला अधिकार दे रही है। अल्पसंख्यक को सरकार विशेष आरक्षण देना चाहती है, जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने रद्द कर दिया है। सरकार अल्पसख्यकों को प्रथम श्रेणी का नागरिक मानते हुए मनमाने ढंग से उनको सुविधायें बांट रही है। पिछले दिनों सरकार द्वारा अल्पसंख्यक क्षेत्र में ४४ पॉलिटेक्निक तथा ११३ आई.टी.आई. खोले जा रहे हैं। इससे बड़ा अपराध सरकार कर रही है, सभी चयन आयोग व चयन समितियों में अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्त्व अनिवार्य करने का निर्देश जारी किया गया है। इन सारे सरकारी प्रयत्नों का परिणाम आज सामने हैं। आज केन्द्रीय सरकार में मुस्लिम सचिवों की संख्या दस प्रतिशत तक पहुँच गई है। भारत सरकार के ७१ आई.ए.एस. सचिवों में सात मुस्लिम सचिव भारत सरकार के आठ विभाग संभाल रहे हैं। जबकि २००६ में मुस्लिम सचिवों की संख्या दो थी। इतना सब करके भी सरकार सन्तुष्ट नहीं है। यह सारी कार्यवाही बहुसंख्यकों के साथ धोखा है और उनके अधिकार/साधनों पर खुली डकैती है।

इससे आगे साम्प्रदायिक दंगारोधी विधेयक के माध्यम से सरकार हिन्दुओं को इस देश में मुसलमानों का दास बनाकर रखना चाहती है। यह कानून पुराने जजिया कानून की याद दिलाने वाला है। यह विधेयक सिद्ध करता है कि भारत सरकार न केवल गैर हिन्दू है, अपितु वह घोर हिन्दू विरोधी भी है। यह विधेयक मुजफ्फरनगर के पीड़ितों को अपराधी बनाता है तथा अपराधी को अपराध करने की छूट देता है। मुजफ्फरनगर में अल्पसंख्यक वर्ग के लोगों द्वारा एक हिन्दू लड़की को तंग किया गया, उसके परिवार वालों ने विरोध किया, उस झगड़े में दो मुस्लिम युवक मारे गये, मुसलमानों ने युवकों को मारने वाले को मार दिया। पुलिस ने सात लोगों को इस काण्ड का अपराधी मानकर पकड़ा, परन्तु उत्तर प्रदेश के गृहमन्त्री ने न केवल उन्हें पुलिस की हवालात से रिहा करा दिया अपितु लड़की के परिवार वालों को अपराधी बनाकर गिरफ्तार करा लिया। यह कार्य साम्प्रदायिक दंगा-विरोधी विधेयक के अनुसार नितान्त विधि सम्मत है। क्योंकि वहाँ अल्पसंख्यक कभी

www.thearyasamaj.org

अपराधी नहीं होता। इस साम्प्रदायिक हिंसा विरोधी कानून की विसंगति और विडम्बना देखिये। यह कानून भारत के संघीय ढाँचे को समाप्त करने वाला है क्योंकि आज कानून व्यवस्था प्रान्तीय सरकार का विषय है, परन्तु इस विधेयक से केन्द्र को दंगा प्रभावित क्षेत्र में सीधा हस्तक्षेप करने का, पुलिस बल भेजने का अधिकार मिलता है, जो संविधान की भावना का उल्लंघन है। इस विधेयक में ऐसे विपरीत प्रावधान है कि एक ही व्यक्ति को एक ही अपराध में दो बार दण्डित किया जा सकता है। एक बार दंगा रोधी कानून में दुबारा अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति अत्याचार उन्मूलन कानून १९८९ में। क्या कोई भी कानून ऐसा करने की अनुमति दे सकता है? परन्तु भारत सरकार ऐसा कानून बनाना चाहती है। इससे आगे कि उपधारा सात में यह कानून कहता है यदि कोई व्यक्ति अल्पसंख्यक वर्ग के प्रति व्यक्ति या समूह के रूप में यौन शोषण करता है तो वह दण्डित किया जायेगा। इस प्रावधान की विशेषता है- अल्पसंख्यक वर्ग का व्यक्ति यही कार्य बहुसंख्यक वर्ग के साथ करेगा तो न वह व्यक्ति दण्डित किया जायेगा, न उस पर कोई कार्यवाही की जा सकेगी। उपधारा आठ में अल्पसंख्यक वर्ग के प्रति यदि बहुसंख्यक वर्ग का व्यक्ति घृणात्मक प्रचार करेगा तो वह भी दण्डनीय होगा, परन्तु अल्पसंख्यक व्यक्ति या समूह ऐसी कार्यवाही में भागीदार होगा तो उस पर कोई भी कार्यवाही करने की अनुमति यह कानून नहीं देता। धारा ९ में बहुसंख्यक समूह द्वारा अल्पसंख्यक व्यक्ति या समूह के विरुद्ध गैर-कानूनी काम करने पर दण्डनीय होगा, परन्तु इसके विपरीत कोई संगठन बहुसंख्यक के विरुद्ध गैर कानूनी कार्यवाही करता है तो यह कानून उस पर कार्यवाही करने की अनुमति नहीं देता। उपधारा १० में यदि कोई व्यक्ति स्वयं धन व्यय करेगा या दंगा करने वाले व्यक्ति की सहायता करेगा तो ऐसा व्यक्ति दण्डनीय होगा। धारा १२ में यदि कोई सरकारी अधिकारी अल्पसंख्यक वर्ग के व्यक्ति को मानसिक या शारीरिक रूप से प्रताडित करेगा तो वह दण्डनीय होगा। इस प्रकार के दंगा-ग्रस्त क्षेत्र में नियुक्त लोक सेवक अधिकारियों को धारा १३ में दण्डित करने का प्रावधान है यदि वे अपने कर्त्तव्य पालन करने में असफल रहते हैं। धारा १४ में विशेष रूप से सुरक्षा बलों के अधिकारी तथा पुलिस बल के अधिकारियों को दण्डित करने का प्रावधान है, जो इस कार्य के लिए नियुक्त किये गये हैं और जिन पर व्यवस्था को संभालने का उत्तरदायित्त्व है। धारा १५ में उस अधिकारी को जिम्मेदार बनाया गया है जिसके निर्देशन में दंगा सम्भालने का उत्तरदायित्त्व दिया गया है। इसमें यदि अपराध किसी और के द्वारा भी किया गया हो तो भी अधिकारी को ही दण्डित किया जायेगा। इसमें जिस कार्यालय या संगठन को इस कार्य में नियुक्त किया गया है उसके अधिकारी दण्ड के भागी समझे जायेंगे। धारा १६ में कहा गया कि इस धारा में किये गये अपराध के लिए उच्च अधिकारी के निर्देशों की अपराध करने वाले को बचाव में उपयोग में नहीं लाये जा सकेंगे। सामान्य रूप से साम्प्रदायिक दंगों की स्थिति में राज्य प्रशासन का कार्य कानून व्यवस्था की जिम्मेदारी संभालना है। इसमें राज्य और केन्द्र के अधिकार और शक्तियों का संविधान में स्पष्ट उल्लेख है। केन्द्र सीधा इस प्रकार की परिस्थितियों में राज्य में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। केन्द्र केवल अपना परामर्श दे सकता है, निर्देश दे सकता है, हस्तक्षेप नहीं कर सकता। यदि यह विधेयक कानून बन जाता है तो केन्द्र को राज्य के अधिकारों में हस्तक्षेप करने का अवसर मिल जाता है।

इस कानून में अपराध का आधार कार्य नहीं बल्कि उसकी जाति और धर्म को बनाया गया है। इस कानून के माध्यम से अल्पसंख्यकों द्वारा बहुसंख्यक को लूटने की छूट दी गई है, उनकी महिलाओं के उत्पीड़न का अधिकार दिया गया है। इतना ही नहीं यह कानून संगठित रूप से बहुसंख्यक लोगों पर अत्याचार करने के लिए प्रेरित करता है। इस कानून का लाभ मुसलमान आतंकवादी और जिहाद करने वालों को भी मिलेगा। इस कानून के कारण वे अल्पसंख्यक होने के कारण कभी अपराधी होंगे ही नहीं। फिर उनको दण्डित कौन करेगा? आज के युग में यह सोचना कि 'यह व्यक्ति हिन्दू है, इसलिए अपराधी है तथा मुसलमान है इसलिये वह निरपराध है।' यह सभ्य समाज के स्वीकार्य होने योग्य बात नहीं है। फिर जिन्होंने इस कानून की रचना की है, उनकी मानसिकता के विषय में आप क्या कहेंगे? इस कानून में एक कमाल और किया गया है। इस कानून के लागू करने के लिए एक सात सदस्यीय राष्ट्रीय आयोग के गठन का प्रावधान किया गया है। इन सात सदस्यों में अध्यक्ष, उपाध्यक्ष के साथ चार सदस्य अल्पसंख्यक वर्ग से होंगे। इसी प्रकार के आयोग का गठन प्रान्तीय स्तर पर भी किया जायेगा। इस कानून की सबसे बड़ी विशेषता है कि जहाँ भी न्याय की सम्भावना है वे सभी दरवाजे बन्द कर दिये गये हैं। इस आयोग में अल्पसंख्यक वर्ग का ही बहुमत रखा गया है। इससे कैसे न्याय की आशा की जा सकती है?

इस आयोग को संवैधानिक अधिकार दिये गये हैं। सरकार का उत्तरदायित्त्व है कि इसके लिए पुलिस और जाँच विभाग की व्यवस्था करे। इस प्राधिकरण को अधिकार है कि वह जाँच करे, छापा मारे, पिछला कार्य देखे और सरकार को अपनी संस्तुति भेजे। इस प्राधिकरण में यह

www.thearyasamaj.org

भी अधिकार दिया गया है कि वह सशक्त बलों को भी अपने अधिकार क्षेत्र में ले सकता है। यह प्राधिकरण केन्द्र व राज्य सरकार को अपनी सलाह भेज सकता है। इस प्राधिकरण का गठन, प्रधानमन्त्री, गृहमन्त्री, नेता विपक्ष, प्रत्येक मान्यता प्राप्त राजनीतिक दल का नेता इसकी चयन समिति का सदस्य होगा। इस प्रकार राज्य में भी इस प्राधिकरण का गठन किया जायेगा।

साम्प्रदायिक हिंसा विधेयक की कार्य पद्धति कानून से निराली है। इस कानून में कानून की धारा १६१ के अनुसार बयान रिकॉर्ड करने की आवश्यकता नहीं है। प्रताड़ित व्यक्ति न्यायालय के सामने १६४ के अन्तर्गत अपने बयान देगा। यदि घृणा या द्वेष फैलाने की इच्छा से बहुसंख्यक व्यक्ति के विरुद्ध अल्पसंख्यक व्यक्ति शिकायत करता है, तो उस व्यक्ति को तब तक अपराधी माना जायेगा जब तक न्यायालय उसे निर्दोष सिद्ध नहीं कर देता। इसकी धारा १४ में न्याय की बिलकुल विपरीत अवधारणा है। न्याय में कोई व्यक्ति तब तक दोषी नहीं होता जब तक न्यायालय में उसका दोष सिद्ध नहीं हो जाता। यह उसके विपरीत बात करता है। इसमें आरोप लगाने वाले व्यक्ति को अपने आरोप प्रमाणित करने के लिए किसी प्रकार के प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं है। उसकी शिकायत ही उसका प्रमाण माना जायेगा। धारा ६७ के अनुसार सरकारी अधिकारी का कर्त्तव्य है कि बिना उच्च अधिकारी के अनुमति के उस शिकायत पर कार्यवाही करे। इससे बड़ा अपराध यह है कि यह कानून अपराधी को बारबार अपराध करने की छूट देता है क्योंकि शिकायतकर्ता का नाम कभी भी आरोपित व्यक्ति को नहीं बताया जायेगा। इस प्रकार सारा कानून न्याय करने के लिए नहीं अपितु अपराध करने की छूट के लिये बनाया गया है। समय-समय पर शिकायत पर की गई कार्यवाही से शिकायतकर्ता को अवगत कराना भी अनिवार्य होगा।

इस विधेयक में ऐसे भ्रामक शब्दों का प्रयोग किया गया है, जिनके अनुसार आप जो चाहें जो अर्थ निकाल सकते हैं। 'धर्म-निरपेक्ष ढाँचे को क्षति पहुँचना।' आजतक इस धर्म निरपेक्षता की कोई व्याख्या ही नहीं की जा सकी। यह कहना कि 'आक्रामक वातावरण बनाना' इस शब्द का कोई अर्थ ही नहीं बनता। इस प्रकार यह विधेयक राज्य के संवैधानिक अधिकारों का हनन कर केन्द्र की मनमानी करने का अधिकार देता है। सोनिया सरकार चुनाव में मुस्लिम मतों को प्राप्त करने के लिए इस विधेयक को संसद के इस सत्र में पारित करवाना चाहती है। इस विधेयक को पढ़कर कोई भी समझदार व्यक्ति समझ सकता है कि इसको बनाने वाले इस देश के हित की बात तो कर ही नहीं रहे हैं, इसके विपरीत रचना करने वाले अपने को इस्लामी शासन और अंग्रेजी शासन के उत्तराधिकारी बनकर बात कर रहे हैं। विधेयक बनाने वालों के मन में न्याय कानून की बात नहीं है। उनका मन हिन्दू विद्वेष से भरा हुआ है। इस कानून से देश के लोगों में परस्पर द्वेष और संघर्ष बढ़ेगा। इस कानून से आतंकवादियों को ही बल मिलेगा। यह कानून न संविधान के अनुकूल है, न समाज के लिए हितकारी है। देश को इस दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति से बचाना प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य है। हमारी उदासीनता देश और समाज के लिए घातक सिद्ध होगी। यह बात न समझे तो नाश निश्चित है-

न चेदिहावेदीन्महती विनष्टि।

- धर्मवीर

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर '**मन्त्री परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक खाता संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक खाता संख्या -10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

www.thearyasamaj.org

आत्मा को पहचानो

-स्वामी विष्वङ्

परमात्मा ने जीवात्मा को मनुष्य का जन्म इसलिए दिया है कि वह अपने उद्देश्य को पूरा कर सके। मनुष्य का उद्देश्य है, दु:खों को दूर करना और सुख-आनन्द को प्राप्त करना। ऐसा तो प्रत्येक मनुष्य कर ही रहा है। क्योंकि मनुष्य प्रातःकाल जागने से ले कर रात्रि में निद्रा लेने तक यही कार्य करता है, जिससे दु:ख दूर हो जाये और सुख प्राप्त हो। परन्तु इतना करने मात्र से मनुष्य का उद्देश्य पूरा नहीं होता। मनुष्य ऐसा कुछ करे, जिससे दु:ख सदा के लिए दूर हो जाये और सदा आनन्द में रहे। आत्मा के शरीर में रहते हुए पूर्ण रूप से दु:ख दूर नहीं हो सकता और पूर्ण रूप से आनन्द बना नहीं रह सकता। हाँ दु:ख के बाद सुख और सुख के बाद दु:ख आते ही रहेंगे। निरन्तर सुखी बना रहे, बीच में दु:ख आये ही नहीं, ऐसा शरीर में रहते हुए कभी सम्भव नहीं हो सकता। मोक्ष में रहते हुए अवश्य सम्भव हो सकता है।

मोक्ष मनुष्य नहीं दे सकता। परमपिता-परमात्मा ही मनुष्य को मोक्ष दे सकता है। परमात्मा सब को मोक्ष नहीं देता। मोक्ष उन्हीं को देता है, जो परमात्मा के अनुरूप चलते हैं। परमात्मा ने वेद के माध्यम से संविधान बनाया है कि मनुष्य को तीन प्रकार के पदार्थों का ज्ञान करना चाहिए। वे तीन प्रदार्थ हैं- प्रकृति से बना जगत्, आत्मा और स्वयं परमात्मा। इन तीनों को जान कर-समझ कर और तदनुरूप चल कर मनुष्य अपने उद्देश्य को पूरा कर सकता है। इन तीनों में से आत्मा को समझने का यहाँ पर प्रयत्न करते हैं। आत्मा अर्थात् जीवात्मा, जीवात्मा **चेतन** पदार्थ है और यह जड़ पदार्थ से सर्वथा भिन्न है। इस कार्य जगत् में जितनी भी आत्माएँ हैं, वे सब एक जैसी हैं। आत्माओं में किसी भी प्रकार की भिन्नता नहीं है, अर्थात् एक आत्मा का जैसा स्वरूप या जैसे गुण हैं। वैसे ही सभी आत्माओं का स्वरूप या गुण हैं। यह वेद का सिद्धान्त है, इस वेद के सिद्धान्त को जान लेने से मनुष्य शरीर में रहता हुआ भी आत्मा स्वरूप को न जानने वालों की अपेक्षा से सर्वाधिक दु:खों को दूर कर लेता है और सर्वाधिक सुखी भी रहता है। शरीर छूटने के बाद मोक्ष में जाता है, तो वहाँ दु:ख का प्रश्न ही नहीं उठेगा। इसलिए आत्मा के स्वरूप को अवश्य जान लेना चाहिए।

जिस प्रकार से जड़ पदार्थों में परिणाम (बदलाव) आते हैं, वैसा परिणाम आत्मा में नहीं आते हैं। आत्मा **अपरिणामी** है। कोई भी व्यक्ति आत्मा में बदलाव नहीं ला सकता। हाँ शरीर में बदलाव अवश्य आते हैं, क्योंकि शरीर जड़ पदार्थ है। जब आत्मा को यह समझ में आता है कि शरीर के बदलाव से मुझ आत्मा में कोई बदलाव नहीं हो सकता तब आत्मा शारीरिक दु:खों के आने पर भी दु:खी नहीं होता। क्योंकि वह जान चुका होता है। इतना ही नहीं कोई अपशब्द (गाली) बोलता हो, कोई किसी दृश्य=रूप को देखने नहीं देता हो, कोई स्पर्श करने नहीं देता हो, कोई रस लेने नहीं देता हो, कोई गन्ध ग्रहण नहीं करने देता हो, तो भी आत्मा को दु:ख नहीं होता। यहाँ पर आत्मा को यह बोध रहता है कि रूप, रस, गन्ध, स्पर्श व शब्द मुझ आत्मा में प्रवेश नहीं कर सकते और न ही मैं (आत्मा) उन रूपादि में प्रवेश कर सकता हूँ। क्योंकि मैं (आत्मा) **अप्रतिसंक्रमा** हूँ, अर्थात् मैं (आत्मा) किसी पदार्थ में जा कर घुलता-मिलता नहीं हूँ और न ही कोई पदार्थ मुझ में आ कर घुल-मिल सकता है। ऐसी परिस्थिति में यदि मुझे रूप, रस, गन्धादि मिले या न मिले, क्योंकि जिन को मिलते हैं उनको और जिनको नहीं मिलते हैं उनको; दोनों में कोई भी अन्तर नहीं आता। इस कारण आत्मा कभी दु:खी नहीं होता।

यहाँ पर यह भी समझ लेना चाहिए कि जिस प्रकार स्वयं को न मिलने पर आत्मा दु:खी नहीं होता। उसी प्रकार अपने से सम्बन्धित अन्य आत्माओं को न मिलने पर भी दु:खी नहीं होता है। जिस प्रकार अन्यों के मृत्यु (शरीर के त्याग) होने पर दु:खी नहीं होता है, उसी प्रकार अपने से सम्बन्धित आत्माओं के शरीर त्यागने पर भी दु:खी नहीं होता। क्योंकि आत्मा को यह बोध रहता है कि मैं **अनादि** और **अनन्त** (न नष्ट होने वाला) हूँ। अर्थात् मैं न तो उत्पन्न होता हूँ और न ही नष्ट-समाप्त होता हूँ। इसलिए मृत्यु से भय नहीं रहता है। यहाँ पर शरीर के साथ-साथ शरीर रहित अन्य जड़ पदार्थ, जो कितना ही अधिक मूल्यवान् भी क्यों न हो? उनके नष्ट होने पर भी दु:खी नहीं होता। आत्मा यह अच्छी प्रकार से जान लेता है कि **इच्छा** मुझ आत्मा का स्वरूप है, अर्थात् मैं इच्छा वाला हूँ- इच्छा करता हूँ। मुझ में अप्राप्त सुख-आनन्द को प्राप्त करने की इच्छा है, यह मुझ आत्मा का स्वरूप है। मैं प्राप्त दु:ख को दूर करने की इच्छा करता हूँ। आत्मा को यह भी ज्ञात होता है कि मैं अब तक अपनी इच्छा को न समझ कर ऊपर-

www.thearyasamaj.org

ऊपर (अर्थात् स्थूल इच्छा) से इच्छा करता रहा, इसी कारण मैंने अपने उद्देश्य को पूरा नहीं किया। अब मैंने जाना है कि पूरी इच्छा (सूक्ष्मता से सौ प्रतिशत) से पुरुषार्थ करूँगा, तो अप्राप्त ईश्वरीय आनन्द को शीघ्रता से प्राप्त कर लूँगा। आत्मा को अपने **क्रतुत्त्व** (यत्न करने का स्वभाव) का बोध होता है कि मैं **प्रयत्न** स्वरूप वाला हूँ- पुरुषार्थ करना मुझ आत्मा का स्वरूप है। मैंने पुरुषार्थ तो बहुत किया है, परन्तु जिस पूर्ण इच्छा से पुरुषार्थ करना होता है; वैसा पूर्ण पुरुषार्थ मैंने नहीं किया। अब मैं पूर्ण पुरुषार्थ करूँगा। आत्मा को यह बोध हो जाता है कि मैं **शुद्ध** हूँ, अर्थात् मुझ में अज्ञान-मूर्खता-अविद्या रूपी मल-मलिनता नहीं है। आज जो भी मेरे पास मूर्खता-अज्ञानता है वह मुझ आत्मा का स्वभाव नहीं है और जो भी मेरे पास मूर्खता है वह मुझ आत्मा में न हो कर मेरे **मन** में विद्यमान है। यह मूर्खता शरीर आदि साधनों के कारण मेरे को प्राप्त हुई है, इसलिए यह मूर्खता रूपी अज्ञान नैमित्तिक है अर्थात् शरीर आदि निमित्त-कारणों से प्राप्त हुई है। शरीर आदि साधनों के कारण जहाँ मूर्खता प्राप्त होती है, वहाँ तत्त्व-ज्ञान-विद्या भी प्राप्त होगी। अब तक मैंने इस विद्या की ओर ध्यान नहीं दिया, अब इस विद्या रूपी तत्त्वज्ञान को पा कर मैं अपने उद्देश्य को पूरा कर सकता हूँ। जब आत्मा को अपनी शुद्धता का बोध हो जाता है, तब आत्मा अन्यों को भी अपने समान शुद्ध अनुभव करने लगता है।

आत्मा स्वयं को और अन्यों को शुद्ध अनुभव करता हुआ अपने सम्पूर्ण व्यवहार को-कार्य-कलापों को शुद्धता से ही करने लगता है। जिससे आत्मा अन्यों के प्रति द्वेष की भावना न करते हुए प्रेम की भावना करने लगता है। सब आत्माओं के साथ उचित व्यवहार करने लगता है। यहाँ पर कोई यह न समझे कि अविद्या वाला **द्वेष** आत्मा का स्वरूप है। हाँ इतना अवश्य समझना चाहिए कि द्वेष दो प्रकार का होता है। आत्मा का **एक** द्वेष वह है, जो अविद्या के कारण उत्पन्न होता है और तत्त्वज्ञान रूपी विद्या के कारण समाप्त भी होता है। आत्मा का **दूसरा** द्वेष वह है, जो आत्मा का स्वरूप है, जो उत्पन्न और विनाश-समाप्ति को प्राप्त नहीं होता। आत्मा के साथ सदा रहता है और वह अविद्या रूप नहीं है। वह द्वेष विद्या रूप है अर्थात् आत्मा सदा दुःख नहीं चाहता है, दुःख के प्रति सदा यह भाव रखता है कि मुझे दुःख नहीं चाहिए और यह भाव मोक्ष में भी रहता है। इसी भाव को द्वेष कहा गया है और इसी द्वेष को आत्मा का स्वरूप कहते हैं, क्योंकि यह सदा आत्मा के साथ रहता है। आत्मा सुख-आनन्द में प्रेम रखता है, इसलिए **प्रेम** आत्मा का स्वरूप है और यह प्रेम विद्या रूप है। यह प्रेम आत्मा में सदा रहता है। आत्मा के साथ रहने वाले मन में अविद्या रूपी प्रेम-राग रहता है और वह राग रूपी प्रेम आत्मा का स्वरूप नहीं हो सकता है। आत्मा को यह बोध होता है कि मैं **अल्पज्ञ** हूँ अर्थात् मैं अल्प-थोड़ा ज्ञान-विद्या रखता हूँ मुझ में अल्प विद्या है। अल्प-विद्या का होना ही आत्मा की अल्पज्ञता है।

आत्मा ऐसा क्या जानता है, जिससे उसको अल्पज्ञ कहा जाये? इसका समाधान यह है कि आत्मा अपने अस्तित्त्व को जानता है कि मैं हूँ- मेरी सत्ता विद्यमान है, मैं दुःख नहीं चाहता और सुख-आनन्द चाहता हूँ, इस प्रकार आत्मा अपने को जानता है। आत्मा स्वयं को अणु स्वरूप जानता है और स्वयं को एकदेशी भी अनुभव करता है। इसी प्रकार जैसे-जैसे उसके स्वरूप हैं, वैसे-वैसे अपने को अनुभव करता है। इसी कारण वह अल्पज्ञ है। स्वयं के बोध के अतिरिक्त आत्मा के पास जगत् से सम्बन्धित और परमेश्वर से सम्बन्धित जो भी ज्ञान है, वह नैमित्तिक (निमित्त से प्राप्त होने वाला) ज्ञान है और यह नैमित्तिक ज्ञान उत्पन्न होता है और आत्मा के निकट रहने वाले मन से अलग भी हो जाता है। परन्तु आत्मा का स्वाभाविक ज्ञान आत्मा के साथ सदा रहता है।

इस प्रकार आत्मा अपने निज स्वरूप को जान लेता है, तो आत्मा के साथ जुड़े हुए समस्त दुःख शीघ्रता से दूर होने लगते हैं। आत्मा सभी के साथ उचित रूप से, धर्म युक्त हो कर, न्याय से ओत-प्रोत हो कर-सत्यता से व्यवहार करने लगता है। जिससे किसी के प्रति राग, द्वेष, मोह, ईर्ष्या, निन्दा आदि न करते हुए अभिमान रहित हो कर सबसे प्रीतिपूर्वक यथा योग्य व्यवहार करता हुआ सांसारिक सर्वोत्कृष्ट अभ्युदय सुख को पाकर शरीर छूटने के बाद ईश्वरीय आनन्द को भी प्राप्त कर लेता है। यह ही आत्मा का-मनुष्य का मुख्य उद्देश्य है।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

जैसे सत्य प्रेम से उपासना किया हुआ परमेश्वर जीवों को दुष्ट मार्गों से अलग और धर्म मार्ग में स्थापन कर के इस लोक के सुखों को उन के कर्मानुसार देता है, वैसे ही न्याय करने हारे भी किया करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.३६

www.thearyasamaj.org

कुछ तड़प-कुछ झड़प

- राजेन्द्र जिज्ञासु

श्री गोपाल शास्त्री का एक ऐतिहासिक लेखः- पूज्य लक्ष्मण जी लिखित ऋषि जीवन का अनुवाद व सम्पादन करते हुए महर्षि के सबसे बड़े विरोधियों के एक ऐतिहासिक लेख का मूलस्रोत कहीं रखकर हम भूल गये। ग्रन्थ का दूसरा भाग प्रेस में छपने चला गया तो पुस्तकालय से यह स्रोत मिल गया। समय पर मिल जाता तो इसकी स्कैनिंग करवाकर ग्रन्थ में दे दी जाती। यह लेख तो ग्रन्थ में छप चुका है। इस पर आवश्यक पाद टिप्पणी भी दे दी गई है।

इस महत्त्वपूर्ण लेख को केवल पं. लेखराम जी तथा श्रद्धेय लक्ष्मण जी ने ही दिया है। पं. लेखराम जी इसको उपलब्ध न करवाते तो सम्भवतः महर्षि महिमा विषयक यह अमूल्य दस्तावेज इतिहासकारों के हाथ न लगता। पं. लेखराम जी के इस महान् उपकार का कोई मूल्याङ्कन तो करे। पं. लेखराम जी के ग्रन्थ को 'विवरणों का पुलिंदा बताने वाले सज्जन इस दस्तावेज़ का महत्त्व क्या जाने?'

आर्यसमाज बूढ़ाना द्वारा मेरठ का आर्य जगत् ऋणी रहेगा जिसने यह दस्तावेज नष्ट होने से बचाये रखा और हमें सौंप दिया। हम ऐसे कई दस्तावेज परोपकारिणी सभा को सौंपते जा रहे हैं। सभा इन्हें चिरायु बनाने का प्रशंसनीय कार्य करने में लगी है।

इस लेख व श्री गोपाल जी के बारे में यहाँ अत्यन्त संक्षेप से कुछ निवेदन करते हैं। महर्षि के प्रमुखतम शत्रुओं में पं. श्रद्धाराम जी तथा पं. श्री गोपाल का स्थान सबसे ऊपर है। काशी शास्त्रार्थ से पहले श्री गोपाल ने ही फ़रुखाबाद में शास्त्रार्थ करने का आडम्बर रचकर हुल्लड़ मचाया था। फिर हरिद्वार के कुम्भ मेला पर ऋषि को अपमानित करने की योजनाओं में पं. श्री गोपाल श्रद्धाराम का पक्का साथी था। कुछ साधुओं ने **जिन्होंने कभी ऋषि को देखा व सुना तक नहीं था** उन्हें धूमधाम से सभा में लाया गया। उनसे कहलवाया गया कि हम स्वामी दयानन्द के उपदेश सुनकर पतित हो गये। अब आप कृपा कर हमारा प्रायश्चित (शुद्धिकरण) करवायें। इस षड्यन्त्र की तो तभी पोल खुल गई। इस पाप कर्म ने श्री गोपाल के आत्मा को झकझोर कर रख दिया। उसने लाहौर से छपने वाले मासिक 'विद्या प्रकाशक' में पश्चाताप करते हुए एक लेख छपवाया जिसका शीर्षक था- 'पं. श्रद्धाराम की बनावट'

अब ऋषि का घोर विरोधी श्री गोपाल शास्त्री महर्षि का गुण कीर्तन करने लगा। उसको श्रद्धाराम जी का सहयोग करने पर बहुत लज्जा आई। उसने अपने एक ग्रन्थ में ऋषि महिमा पर एक भावपूर्ण मार्मिक फ़ारसी कविता दी है। वह फ़ारसी कविता पूज्य लक्ष्मण जी के ग्रन्थ में छपी है। श्री डॉ. वेदपाल जी मेरठ वाले इस ग्रन्थ की खोज में लगे हैं।

हमें 'विद्या प्रकाशक' के मिलने की कतई आशा नहीं थी। पं. लेखराम का लहू रंग लाया जो मेरठ वालों के सहयोग से असम्भव सम्भव हो गया। इसके साथ यह भी बता दें कि इसी कुम्भ मेला के **तुरन्त बाद श्रद्धाराम जी का भी हृदय परिवर्तन हो गया।** इसके प्रमाण भी हमने दे दिये हैं। एक प्रमाण तो श्री श्रद्धाराम का ऋषि के नाम लिखा वह पत्र है जो डॉ. धर्मवीर जी तथा आचार्य विरजानन्द जी ने खोजा है। श्रद्धाराम जी का अन्तिम समय का एक पत्र हमने ग्रन्थ में दिया है। इसे पढ़कर श्रद्धाराम जी के पश्चाताप को इतिहासकार जानेंगे। यह दस्तावेज़ भी हम सभा को सौंप रहे हैं।

विचारणीय सुझावः- परोपकारिणी सभा तथा सम्पूर्ण आर्यजगत् से हमारी विनम्र विनती है कि 'ऋषि उद्यान' तथा अन्यत्र भी कहीं कहीं ऐसे महत्त्वपूर्ण लेखों को शिलाओं पर लिखवाकर प्रचारित किया जावे। हमारे व्यक्तियों ने ही हमारे बार-बार लिखने पर भी इन पत्रों व प्रमाणों को अपने ग्रन्थों व पुस्तकों में स्थान नहीं दिया तो विरोधी इनको क्यों प्रचारित करेंगे? स्वामी विवेकानन्द जी के बारे में यदि कुछ ऐसी सामग्री संघ परिवार को मिलती तो अब तक कई भाषाओं में छप जाती। वे घर-घर उसे पहुँचा देते। जिन्हें धर्म की बलिवेदी पर प्राण अर्पित करते समय पं. लेखराम जी ने यह रक्त रंजित सन्देश दिया था- "आर्यसमाज से लेखनी व मौखिक प्रचार का कार्य बन्द न हो" उन्हें हम क्या कह सकते हैं?

जागरूक होकर उत्तर दिया करोः- कॉलेज में पढ़ते समय कभी पं. बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार के एक व्याख्यान में ये पंक्तियाँ सुनी थीं:-

ज़रा छेड़े से मिलते हैं मिसाले ताले तम्बूरा,
मिला ले जिसका जी चाहे, मिला ले जिसका जी चाहे।

अर्थात् प्रहार होते ही हम उत्तर देने को तैयार रहते हैं। जैसे तम्बूरा बजाओ तो तत्काल ताल पर बजने लगता है। एक खरे आर्य समाजी की यही पहचान है। आर्य धर्म और दर्शन पर वार प्रहार होते ही रहते हैं। परोपकारी सदैव उत्तर के लिये तैयार रहता है। पहले आर्यसमाज में उत्तर देने में समर्थ अनेक विद्वान् थे परन्तु अब अधिकांश लोग संस्थाओं के मायाजाल में उलझे हुए हैं। उन्हें इसी में आनन्द आता

www.thearyasamaj.org

है।

प्रिय पंकज पुराने आर्यों के सदृश आर्य धर्म के अनुकूल और प्रतिकूल छपने वाले लेखों व साहित्य की जानकारी लेने में बहुत चौकस है। आपने पता दिया है कि महाराष्ट्र में 'आर्यों के आदि देश' विषयक पर विषैला लेख छपा है। इसमें यह भी छपा है कि ये लोग (आर्यसमाज की ओर संकेत है) यहाँ के आदिवासियों को 'वनवासी' लिखकर व कहकर गाली देते रहते हैं। ऐसी और भी कई बातें हैं। इनका उत्तर देने को कहा है। उन्हें वह लेख परोपकारी को भेजने के लिये कहा है फिर जिसे कहा जावेगा, वह विद्वान् उत्तर दे देगा।

ऐसी ही बातें रांची के ईसाई पत्र 'पवित्र हृदय' में कभी छपी थी। हमने एक-एक बिन्दु का उत्तर परोपकारी में दिया था। श्री धर्मवीर जी ने पवित्र हृदय को भी वह लेख भेजा। उसने भी प्रकाशित किया था। यहाँ आक्षेपक का लेख देखे बिना दो बातें विरोधियों को बता देना चाहते हैं। शेष फिर लिखा जावेगा।

१. पश्चिमी गोरी जातियों के आने पर अठारहवीं शताब्दी के अन्त में **पहली बार इस विषैले मत का आविष्कार किया गया कि आर्य लोग इस देश के मूल निवासी नहीं। ये बाहर से यहाँ आये।** इन गोरे पादरियों से पहले कभी भी किसी ने यह न कहा और न ही लिखा।

यूरोपीय शासकों के यहाँ आने से पहले मुग़ल, तुर्क, ईरानी, शक, हूण व यूनानी आक्रमणकारी भी आये। मुस्लिम शासकों के दरबारी इतिहासकारों ने अपने किसी भी ग्रन्थ में यह मिथ्या मत नहीं दिया। जो अंग्रेजों से पहले सैकड़ों वर्षों से यहाँ थे उन्हें तो आर्यों के आक्रमणकारी होने की बात पता न चली परन्तु इन सूली व साम्राज्य के वेतन भोगी स्कॉलरों की गढ़न्त पर बलिहारी कि इन्होंने अंग्रेजी पठित बाबुओं के दिमाग़ में यह बात ऐसी बिठाई कि जवाहर लाल नेहरू ने अंग्रेजों से भी अधिक जोश से इस मत का प्रचार किया व करवाया।

२. सब जातियों व मतावलम्बियों को अपने मूल स्थान का ममत्व होता है आर्य लोग बाहर से आये थे तो फिर इन लोगों ने भारत से बाहर जाना पाप कैसे और क्यों मान लिया?

३. हम वनवासी कहकर अपने जातीय बन्धुओं को गाली नहीं देते। वनवासी और वानप्रस्थी हमारे धर्म और संस्कृति में सम्मान सूचक शब्द हैं। हमारा प्यारा राम वनवासी था। लक्ष्मण को हम श्रद्धा से वनवासी कहते हैं। 'सीता का वनवास' नाम से पुस्तकें छपती चली आ रही हैं। हमारे सब ऋषि, मुनि महात्मा वनवासी थे। हम इस तथ्य पर इतराते हैं। महर्षि दयानन्द ने वन पर्वत छान मारे। ऐसा वर्णन करके हम ऋषि को क्या गाली देते हैं? पश्चिमी गोरे इतिहास लेखकों ने भी अपने ग्रन्थों में चार आश्रमों का वर्णन करते हुए वानप्रस्थ अथवा वनवास के बारे में यह घृणित बातें नहीं लिखीं जो इन दिनों प्रचारित की जा रही हैं। अमरीकन दार्शनिक विचारक इमर्सन ने तो वनों की संस्कृति प्राकृतिक जीवन शैली की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इमर्सन पर उपनिषदों के ऋषियों की अमिट छाप थी। हमारा उपनिषद् साहित्य और दर्शन ग्रन्थ दिल्ली, मुम्बई, सेंट फोर्ट डेविड मद्रास व कोलकाता के भव्य भवनों व कोठियों में नहीं लिखे गये थे। इनकी रचना वनवासी ऋषियों के आश्रमों में हुई थी। मेरे प्यारे व पूज्य कणाद ऋषि को कणाद क्यों कहा जाता है। कुटिल षड्यन्त्रकारी परकीय पन्थों के ये चाकर लेखक सब कुछ जानते हैं कि हमारा कणाद मुनि वनवासी था।

जब पूरा लेख सामने आयेगा तो एक-एक आक्षेप का सप्रमाण उत्तर देंगे। इनका शरारती दिमाग़ तो यहाँ तक पहुँच गया है कि ये लोग यह दुष्प्रचार करते हैं कि आदिवासियों को हम दस्यु कहते हैं। वेद शास्त्र में, आर्य साहित्य में किसी वर्ग विशेष को दस्यु नहीं कहा गया। 'अकर्मा दस्यु' यह वेद की सूक्ति है अर्थात् कर्महीन, प्रमादी, निकम्मा और निठल्ला, मुफ्तखोर, कामचोर जो कोई भी है वह दस्यु है। कहिये इससे उत्तम उपदेश और सन्देश क्या हो सकता है?

धर्म और संस्कृति की रक्षा कैसे हो?:- हमने राष्ट्रीयता, धर्म व संस्कृति पर वार प्रहार का ऊपर उदाहरण दे दिया। काशी से पुनर्जन्म पर प्रहार करते हुए गीता, उपनिषद्, वेद, दर्शन सबको एक मौलवी ने अपने पुस्तक में रगड़े फेर दिये। उत्तर देने के लिए परोपकारी याद आया। हमने उचित सप्रमाण युक्तियुक्त उत्तर दिया। विश्व हिन्दू परिषद् के सन्त, महन्त, सन्तों की संसद चुप्पी साधे रही। अब समाचार छपते रहते हैं कि संस्कृति की रक्षा के लिए तुलसी के पौधे ये लोग बाँटते रहते हैं। इससे क्या धर्म रक्षा होगी? तुलसी का पौधा गुणकारी है। यह सत्य है परन्तु गुणहीन तो अर्क, नीम, आमला, कीकर, मेथी, अदरक भी नहीं, ये सब भी गुणकारी हैं। सब निर्गुण हैं और सभी सगुण हैं। इन पेड़-पौधों की रक्षा से लाभ तो होगा ही परन्तु पेड़ पौधे धर्म प्रचार व धर्म रक्षा नहीं करेंगे, न कर सकते हैं। ऐसा करके आप लोगों को अंधविश्वासी तो बना सकते हैं। कोई धर्म संस्कृति का रक्षक, वीर वैरागी, वीर हकीकत तथा पं. लेखराम शूर शिरोमणि, मिट्टी के गणेश जी बाँटने और तिलक लगाने से पैदा नहीं होंगे। इससे अच्छा तो यही है कि घर-घर में गायत्री मन्त्र की व्याख्या पहुँचाई जावे। धर्म संस्कृति की रक्षा व प्रचार के लिए किये जाने वाले

www.thearyasamaj.org

विश्व हिन्दू परिषद् के कार्य अंधविश्वासों की खेती को खाद देने जैसे हैं। बस अड्डों पर, स्टेशनों पर, चौक चौराहों पर शनिवार को शनि देवता के नाम पर भीख माँगने के विरुद्ध कोई आन्दोलन छेड़ कर एक अंधविश्वास का उन्मूलन तो कर दिखाओ।

प्रार्थना और पुरुषार्थः- महर्षि दयानन्द की एक अनूठी देन यह है कि आपने सहस्रों वर्षों के पश्चात् अपने 'पुरुषार्थ दर्शन' का शंख फूँकते हुए यह घोष किया कि प्रार्थना से पूर्व पुरुषार्थ का होना आवश्यक है। पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय ने सारगर्भित शब्दों में लिखा है, "His is a philosophy of bold actions and not of idle musings." अर्थात् ऋषि का दर्शन वीरोचित कर्मों का दर्शन है। यह निठल्ले चिन्तन का दर्शन नहीं है।

देश जाति का दुर्भाग्य है कि भारत के सब मत पन्थों में आज 'मन्नत दर्शन' अथवा कामना दर्शन की हवा चल रही है। हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई इसी रोग का शिकार हैं। यहाँ मन्नत माँगो, वहाँ की यात्रा करो, कामनायें पूरी होंगी। मन्नते माँगने के लिये तीर्थ यात्रा में भटक रहे हैं। आज ही वैष्णव देवी जाने वाले दुर्घटना ग्रस्त हुए हैं। कई काल कराल के गाल में विलीन हो गये हैं।

देश की सुरक्षा, जातीय गौरव, मान, समृद्धि, आन्तरिक शान्ति की मन्नत तो आज तक किसी ने किसी देवता से माँगी नहीं। भीतर बाहर से हमारा अस्तित्व सङ्कट में है। मन्नतें माँगने से ही कामनायें पूरी होने लगें तो वेद, शास्त्र, उपनिषद् और गीता में कर्मण्यता का उपदेश सन्देश किस के लिए है। विश्व हिन्दू परिषद् ने सनातन धर्म सभाओं को तो बिना डकार लिये खा पचा लिया है। आर्यसमाज कुछ-कुछ बचा है। सब राजनैतिक दल आर्यसमाज को भी निस्तेज बनाने और विगठित करने में लगे हैं। मज़ारों पर चादरें चढ़ाने वाले बाबे घुसपैठ करके आर्यसमाज के विनाश में जुटे हैं।

आर्यवीरो! उठो, चेतो आगे बढ़कर इस अन्धविश्वास के अन्धकार को चीरो। मन्नते माँगने से मुर्दे व मूर्तियाँ कामनायें पूरी कर सकते तो सबसे सुखी आलसी, निकम्मे व निठल्ले पेटू होते। फिर देश पदाक्रान्त, पददलित व पराधीन क्यों होता?

पं. लेखराम जी का आर्यत्व व सत्यनिष्ठाः- ऋषि जीवन पर कार्य करते हुए हमने महर्षि के शास्त्रार्थों के प्रथम संस्करण तथा तत्कालीन पत्रों में उनके प्रकाशन के अंक खोज कर उनका पं. लेखराम जी के ग्रन्थ से व अन्य शास्त्रार्थ संग्रह ग्रन्थों से मिलान किया तो इससे हमें बड़ा लाभ हुआ। एक शास्त्रार्थ का प्रथम संस्करण कहीं से भी नहीं मिल रहा था। यह था ऋषि का **मौलवी अहमद हसन** के साथ (दो विषयों पर) हुआ जालन्धर का शास्त्रार्थ। यह शास्त्रार्थ पुस्तक रूप में एक मुसलमान ने ही पहले प्रकाशित करवाते हुए महर्षि की विशेष प्रशंसा की और मौलवी की नीति-रीति पर आपत्ति की। यह शास्त्रार्थ इससे पहले पत्रों में भी छपा था।

पं. लेखराम जी ने अपने ग्रन्थ में मुसलमान बन्धु द्वारा प्रकाशित पुस्तिका को देकर इसे सुरक्षित कर दिया। श्री लक्ष्मण जी ने भी पं. लेखराम जी का अनुकरण किया। अन्य बड़े-बड़े लेखकों ने इस शास्त्रार्थ को या तो दिया नहीं जो चर्चा की भी तो भयंकर भूल का एक कुचक्र चला दिया। हम इन भूलों का विवरण यहाँ नहीं देंगे।

मुसलमान भाई वाला ऐतिहासिक संस्करण आर्यसमाज के पास होना चाहिये था। श्री सत्यजित् जी की लगन व सूझ से इसकी एक प्रति परोपकारिणी सभा के भण्डार में सुरक्षित हो गई है। मान्य सत्यजित् जी उर्दू नहीं जानते परन्तु आपने ब्रह्मचारियों को आदेश दिया कि उर्दू का एक पृष्ठ भी जिज्ञासु जी को दिखाये बिना नष्ट न हो। इस प्रकार यह हम तक पहुँच गया। इसको स्कैनिंग करवा कर ऋषि जीवन में तो दिया ही है इसकी मूल प्रति भी सभा को हम सौंप रहे हैं।

पं. लेखराम जी ने अपने ग्रन्थ में इसे उद्धृत करते हुए **अपनी सत्यनिष्ठा तथा आर्यत्व का विशेष परिचय दिया है।** कातिब की असावधानी से उसमें एक स्थान पर एक शब्द छूट गया। यह शब्द 'न' अथवा 'नहीं' है। इससे वाक्य के अर्थ ही उलट नहीं हुए कथन इस्लाम की मान्यताओं के उलट छप गया। पं. लेखराम जी ने कातिब की इस भूल का सुधार करते हुए यह 'न' शब्द जोड़ कर इस्लाम के साथ न्याय किया है। यही आर्यत्व है। इसे सत्यनिष्ठा का एक ज्वलन्त प्रमाण मानना पड़ेगा। इसी आर्योचित व्यवहार पर हमें अभिमान है। इसी में पं. लेखराम महान् की शान है।

पं. लेखराम जी का कातिब भी एक भूल कर बैठा। प्रेस से तथा प्रकाशन व लेखन से जुड़े लोग जानते हैं कि जब ऊपर नीचे की दो पंक्तियों में दो चार अथवा एक शब्द भी दूसरी बार आ जावे तो कातिब, कम्पोजिटर (और आज कम्प्यूटरकार) उसे टाईप करते लिखते हुए सहज में ही भूल कर जाता है। मौलवी जी के अन्तिम पैरा में भी इस कारण गड़बड़ हो गई। भाव तो कुछ विशेष न बदला परन्तु वाक्य अटपटे हो गये। ईश कृपा से अब १३६ वर्ष के पश्चात् भूल पकड़ में आई है। इसके लिए हम मान्य सत्यजित जी को ही बधाई देंगे जिनकी श्रद्धा से हम भूल का सुधार कर पाने में सक्षम हुए।

ऋषि के एक और शास्त्रार्थ का वृत्तान्तः- हम

www.thearyasamaj.org

परोपकारी में पहले बता चुके हैं कि मसूदा के राव बहादुर सिंह राजस्थान के ही नहीं आर्यसमाज के प्रथम शास्त्रार्थ महारथी होने का गौरव प्राप्त है। महर्षि की देखरेख में आपने ब्यावर के पादरी श्री बिहारीलाल जी से शास्त्रार्थ किया था। यह शास्त्रार्थ उसी समय पत्रों में छप गया था। हमारे पास वह अङ्क है जिसमें यह शास्त्रार्थ प्रकाशित हुआ था परन्तु ऋषि जीवन तैयार करते समय यह अङ्क पुस्तकालय में से न मिला। अब मिल गया है। पं. लेखराम जी के वृत्तान्त से मिलान किया तो कहीं कोई भाव भेद न पाया। आरम्भ में तथा अन्त में साधारण सा शब्द भेद अवश्य है। ग्रन्थ लेखक अनुवाद करते हुए अपनी शैली के अनुसार किसी वाक्य को अपने शब्दों में भी दे सकता है। यह स्मरण रहे कि शास्त्रार्थ होने के थोड़ा समय बाद ही यह शास्त्रार्थ 'आर्य दर्पण' में उर्दू हिन्दी दोनों भाषाओं में छपा था।

हमारा मत यह है कि अब जब परोपकारिणी सभा शास्त्रार्थ छापे तो पाद टिप्पणियों में वे वाक्य भी दे देने चाहिये जिनमें किञ्चित शब्द भेद या शैली भेद है। इससे ग्रन्थ की गरिमा बढ़ेगी।

महरूम जी के पत्र:- उर्दू न जानने वाले आर्य विद्वान् भी प्रो. तिलोकचन्द जी 'महरूम' के नाम नामी से परिचित हैं। आप विश्व प्रसिद्ध उर्दू कवि हैं। यदि आप मुसलमान होते तो भारत सरकार ने आपके नाम पर विश्वविद्यालय बनाया होता। आप दृढ़ देशभक्त आर्यसमाजी थे। महात्मा जैमिनि 'सरशार' की कोटि का आर्य कवि आपका सुशिष्य था। गुरु शिष्य एक दूसरे से बढ़कर थे। हमारे माननीय राणा गिनौरी आपकी तीसरी पीढ़ी में आते हैं अर्थात् राणा जी सरशार जी के शिष्य हैं। आधुनिक हिन्दी साहित्य में ऋषि के पत्र व्यवहार को बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त है। धन्य थे वे आर्य नेता और विद्वान् जिन्होंने ऋषि के पत्रों की खोज का आन्दोलन चलाया। इन पंक्तियों के लेखक ने भी आर्य महापुरुषों के पत्रों की सुरक्षा के लिये कुछ करणीय कार्य किया है।

स्वर्गीय महात्मा जैमिनि 'सरशार' जी के काग़जों में से श्रीयुत् महरूम जी के पत्रों का संग्रह प्राप्त हुआ है। इन पत्रों का साहित्यिक महत्त्व तो है, राष्ट्रीय व धार्मिक दृष्टि से भी बड़ा महत्त्व है। इन में पं. चमूपति जी का भी एक पत्र है। इन पर विहंगम दृष्टि डालते ही मन में आया कि आर्य रत्न 'महरूम' जी के पत्रों का यह संग्रह अवश्य प्रकाशित कराना चाहिये। ऐसी योजना बनाकर इसे प्रकाशित करवाया जावेगा कि बड़ी-बड़ी समाजें व साहित्य प्रेमी सम्पन्न आर्य पुरुष इसकी सौ-सौ, पचास-पचास प्रतियों के अग्रिम सदस्य बनकर इस पत्र व्यवहार को बड़े-बड़े साहित्यकारों, विद्वानों और विश्वविद्यालयों को भेंट स्वरूप पहुँचायें। इससे आर्यसमाज का गौरव होगा अन्यथा कौन जाने मानेगा कि महरूम जी आर्यसमाज के रत्न थे।

वेद सदन, अबोहर, पंजाब-१५२११६

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में पिछले लगभग १० मास से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। ऋषि उद्यान में रह रहे डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक खाता संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आइ**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक खाता संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091

email : psabhaa@gmail.com

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

हे देव! सुनो

- दाताराम आर्य 'आलोक'

हे देव! विचर रहे निर्बुद्धि जन, उन्हें बुद्धि से भरपूर करो।
अविद्या आवरण से जो ढके, दे ज्ञान प्रभा उसे दूर करो।
दुर्जन, दुष्ट, अहंकार वशी, अग्ने! उनका मद चूर करो।
बन जाए विश्व का एक धर्म, भू तल पर ऐसा नूर करो।

- ग्रा. बुटेरी, तह. बानसूर, जि. अलवर, राजस्थान

जब तक मनुष्य सुख-दु:ख हानि और लाभ की व्यवस्था में परस्पर अपने आत्मा के तुल्य दूसरे को न जानते तब तक पूर्ण सुख को प्राप्त नहीं होते इस से मनुष्य लोग श्रेष्ठ व्यवहार ही किया करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४०

www.thearyasamaj.org

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर (द्वितीय स्तर)

दिनांक १५ से २२ जून २०१४

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे। साथ ही पढ़ाये गये विषयों की लिखित परीक्षा व आपके द्वारा पालन किये गये शिविर के अनुशासन का भी आंकलन किया जायेगा, इसी आधार पर प्रमाण–पत्र भी दिये जायेंगे। इस दिशा में अब तक दो शिविरों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर सफल प्रयास किया गया है। **इस द्वितीय स्तर के शिविर में वे ही भाग ले सकेंगे, जिन्होंने प्राथमिक स्तर वाले शिविर में भाग लिया है।** इस शिविर में प्राथमिक स्तर वाले शिविर की अपेक्षा अधिक सूक्ष्मता से विषयों का अनुभव करवाया जाएगा और वैसा ही सूक्ष्मता से, कठोरता से नियम व अनुशासन होगा।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. दिनचर्या के कुछ भाग में आकृति मौन भी अनिवार्य होगा।
३. प्रार्थी की न्यूनतम दसवीं के स्तर की योग्यता अनिवार्य है। इस हेतु प्रमाण–पत्र की प्रतिलिपि लाना आवश्यक है।
४. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
५. शारीरिक व मानसिक सात्विकता के लिए यथासम्भव भोजन की मात्रा निश्चित होगी।
६. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
७. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
८. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
९. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखना, पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
१०. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा सर्दी, खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।
११. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
१२. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।
१३. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा। उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।
१४. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ–मंत्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व

www.thearyasamaj.org

शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क ५०० से १५०० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ अन्यथा यहाँ भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मंत्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

-संयोजक

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. २४ नवम्बर से १ दिसम्बर तक **ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर**, सम्पर्क : ०९४१४००३७५६, समय : मध्याह्न १.३० से २.३० बजे।

२. १३ से २० अप्रैल, २०१४ **ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर**, सम्पर्क : ०९४१४००३७५६, समय : मध्याह्न १.३० से २.३० बजे।

३. १६ से २३ मई, २०१४ **आर्यवीर शिविर**, सम्पर्क- ०९४१४४३६०३१

४. २४ से ३१ मई, २०१४ **संस्कृत सम्भाषण शिविर**, सम्पर्क- ०९४१४७०९४९४

५. १ से ८ जून, २०१४ **आर्य वीराङ्गना शिविर**, सम्पर्क- ०९४१४४३६०३१

६. १५ से २२ जून, २०१४- **योग-साधना शिविर (द्वितीय स्तर)**, सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

www.thearyasamaj.org

ध्यान प्रशिक्षण योजना

ध्यान का महत्त्व सदा से रहा है। आज के तनाव व प्रतिस्पर्धा के वातावरण में यह अधिक आवश्यक हो गया है। नई पीढ़ी यज्ञादि कर्मकाण्ड की अपेक्षा-ध्यान में अधिक रुचि व आकर्षण रखने लगी है। प्रौढ़ों व वृद्धों की आध्यात्मिक उन्नति की चाह ध्यान के माध्यम से पूरी हो सकती है। समाज सुधार व उन्नति के इच्छुक व इसमें प्रयत्नशील आर्यों को ध्यान प्रशिक्षण का उपाय सार्थक लगेगा। ऐसी इच्छा वाले सज्जन अपने यहाँ किसी भी आर्यसमाज, आर्य संस्था, विद्यालय, महाविद्यालय, गुरुकुल, सार्वजनिक स्थान आदि में 'ध्यान-प्रशिक्षण' करवाना चाहते हों, तो कृपया अपने व कार्यक्रम-स्थान, समय आदि की पूरी सूचना के साथ सम्पर्क करें।

परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षित अनेक ध्यान-प्रशिक्षक इस कार्य में सेवा के लिए तैयार हैं। आयोजकों को कार्यक्रम हेतु स्थान, बैठक-व्यवस्था, आवश्यक हो तो माईक आदि की व्यवस्था, प्रशिक्षक के निवास, भोजन, आवागमन यात्रा आदि की व्यवस्था करनी होगी।

सम्पर्क-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षण योजना, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर, ३०५००१, दूरभाष-०१४५-२४६०१६४, ईमेल-psabhaa@gmail.com

ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर

२४ नवम्बर से १ दिसम्बर, २०१३, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर। अधिकतम संख्या-५०। मात्र पूर्व पञ्जीकृत प्रतिभागियों के लिए। इसमें विद्वद् गोष्ठी द्वारा निर्धारित आर्यसमाज की ध्यान पद्धति का प्रशिक्षण दिया जायेगा व ध्यान करवाने का अभ्यास भी करवाया जायेगा। लिखित एवं प्रायोगिक परीक्षा के बाद योग्य व्यक्तियों को परोपकारिणी सभा द्वारा प्रशिक्षक-प्रमाण पत्र भी दिये जायेंगे। शिविर शुल्क १००० रु. है। २४ नवम्बर सायं ४ बजे तक पहुँचना अनिवार्य है। विलम्ब से आने वालों की शिविर में सहभागिता नहीं हो पायेगी। शिविर का समापन १ दिसम्बर को सायं ५ बजे तक हो जायेगा। इच्छुक व्यक्ति, कृपया सम्पर्क करें-९४१४००३७५६, समय-मध्याह्न १.३० से २.३०।

पता-संयोजक, ध्यान प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर, परोपकारिणी सभा, दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर, राज. ३०५००१। ईमेल-psabhaa@gmail.com

अतिथि यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगांठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय जन्म तिथि/वैवाहिक वर्षगांठ आदि व दूरभाष संख्या सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नगद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

www.thearyasamaj.org

।।ओ३म्।।

अलग-अलग स्तरों में योग-साधना शिविर

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि-उद्यान, अजमेर में वर्षों से अब तक योग्य आचार्यों द्वारा योग-साधकों का निर्माण करने के लिए वर्ष में दो बार योग से सम्बन्धित व ध्यान से सम्बन्धित शिविरों का आयोजन किया जाता रहा है और साधकों के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयास किया जाता रहा है। समाज में और अधिक योग्य व आदर्श साधकों की आवश्यकता अनुभव करते हुए इस वर्ष जून मास के शिविर में नवीन पाठ्यक्रम की विधि अपनाकर इस दिशा में एक नया मोड़ दिया गया है।

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान में आयोजित २० से २७ अक्टूबर २०१३ को योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर) लगाया गया। यह शिविर ध्यान से सम्बन्धित, ईश्वर-जीव-प्रकृति के वास्तविक स्वरूप को जानने से सम्बन्धित, योगदर्शन व सांख्यदर्शन के कुछ प्रमुख विषयों के सूत्रों के माध्यम से प्राथमिक स्तर पर योगदर्शन व सांख्यदर्शन को जानने-समझने से सम्बन्धित, आत्मनिरीक्षण में कुछ नये विषयों को सूक्ष्मता से समझने से सम्बन्धित, दिनचर्या को अनुशासित व सात्त्विक बनाने से सम्बन्धित तथा विभिन्न सैद्धान्तिक व व्यावहारिक विषयों के ज्ञान से सम्बन्धित प्रारम्भिक स्तर के योग के इच्छुक साधकों के लिए लगाया गया। इस योग-साधना शिविर को आगामी वर्षों में चतुर्थ स्तर तक लगाने की योजना बनाई गई है। प्रारम्भिक स्तर से लेकर द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्तर तक के शिविरों में पूर्व सूचित पाठ्यक्रमित विषयों में अधिक से अधिक सूक्ष्मता, दिनचर्या में और अधिक अनुशासन व सात्त्विकता, आहार-शुद्धि से लेकर मन, आत्मा की शुद्धि पर्यन्त अनुभवात्मक स्तर पर योग-साधकों को ज्ञान करवाया जाएगा। प्रत्येक स्तर के साधकों को उनके सैद्धान्तिक व व्यावहारिक ज्ञान से सम्बन्धित तथा उनके व्यक्तिगत आचरण व अनुशासन को दृष्टि में रखते हुए परीक्षा-पद्धति के माध्यम से प्रथम-श्रेणी व उच्च प्रथम-श्रेणी के प्रमाण-पत्र दिए जायेंगे। इस प्रकार की विधि से योग्य साधकों को समाज में सम्मान मिलेगा तथा वे और अधिक उत्साह से समाज व देश के कल्याण के लिए कार्यरत होंगे, उन्हें देखकर अन्य साधक भी प्रेरित होंगे।

परोपकारिणी सभा व गुरुकुल ऋषि उद्यान के योग्य आचार्यों व संयोजकों द्वारा नवनिर्मित इस योजना के प्राथमिक स्तर में पर्याप्त उपलब्धि हुई है। भविष्य में इस योजना में आप सब के सहयोग की आवश्यकता है।

पृष्ठ ३१ का शेष भाग.....

प्रबल माध्यम बनाकर संगठित रूप से पाखण्ड-खण्डन को प्रमुखता देनी होगी। किन्तु खेद है कि आर्यसमाजें, संस्थाएँ और सभाएँ प्राय: इस अत्यावश्यक कार्य में सक्रिय नहीं हैं। उनकी प्राथमिकता अधिकाधिक धन, सम्पत्ति एकत्र करना और कभी-कभी सम्मेलन करना मात्र रह गया है। अत: प्रभावशाली राजनेता तथा धनी व्यक्ति इनके पदाधिकारी बन रहे हैं, जो वैदिक विचारों के प्रसारक तो क्या उनके अनुयायी भी नहीं हैं। एक प्रसिद्ध गुरुकुल सहित कुछ बड़ी आर्यसमाजों के उत्सवों में मेरे प्रवचनों में पाखण्ड और अवैदिक मतों का शालीन शब्दों में किए गए खण्डन पर उनके द्वारा अप्रसन्नता व्यक्त की गई। आर्य उपदेशकों को प्राय: सलाह क्या, निर्देश दिया जाता है कि वे खण्डनात्मक प्रवचन न दें। इसके लिए वे तर्क देते हैं कि खण्डनात्मक प्रवचनों से श्रोतागण रुष्ट होकर आर्यसमाज से दूर हो जाते हैं। किन्तु मेरा अनुभव है कि अन्य मतावलम्बियों के सत्संगों के विरुद्ध आर्यसमाज के उत्सवों में तर्क-प्रिय जिज्ञासु युवक कुछ 'नवीन' सुनने के लिये ही आते हैं और उनमें से अनेकों प्रभावित होकर सत्यता को स्वीकार भी करते हैं। मैंने अपने बाल्यकाल में आर्य विद्वानों के खण्डन-मण्डन वाले प्रवचनों को सुनने के लिए वार्षिकोत्सवों पर भारी भीड़ उमड़ते देखा है। महर्षि के खण्डनात्मक प्रवचनों को सुनने के लिये श्रोताओं की भीड़ और उनके प्रभाव से पाखण्ड त्यागने वालों की संख्या क्या कम होती थी?

अत: मैं महर्षि के सच्चे अनुयायी आर्यों से निवेदन करता हूँ कि महर्षि के सपनों को साकार करने के लिए सर्वप्रथम अपने संगठन को शुद्ध और सुदृढ़ करें। इसके लिए आर्यसमाजों को सक्रिय करें, उन्हें धन-लोलुप, पद-लोलुप पदाधिकारियों से मुक्त कराएँ तथा साप्ताहिक अधिवेशनों व सम्मेलनों में सैद्धान्तिक प्रवचनों को वरीयता दें। आर्य विद्वानों को भी चाहिये कि वे महर्षि दयानन्द द्वारा बतलाए गए वैदिक विचारों को ही स्पष्ट करें, उनके विपरीत अपने विचार न दें और न अपने को अधिक विद्वान् सिद्ध करने के लिए अन्य आर्य विद्वान् की निन्दा करें। मेरा मानना है कि वेदों, शास्त्रों, उपनिषदों का सार ऋषिकृत सत्यार्थ-प्रकाश व ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में उपलब्ध है, अत: इनके पठन-पाठन एवं प्रचार की समुचित व्यवस्था करने से पाखण्ड व अन्धविश्वास मिटाने में सहायता मिलेगी।

और अन्त में एक चेतावनी-आर्य समाजियों में भी गुरुड़म तथा अन्धविश्वास पनप रहा है। इसे रोके बिना तो वही बात होगी कि-

बड़े गौर से सुन रहा था ज़माना।
हमीं सो गए दास्ताँ कहते-कहते।।

एम ३३१, आशियाना, लखनऊ, उ.प्र.

www.thearyasamaj.org

महर्षि दयानन्द सरस्वती की दृष्टि में यज्ञ

- विरजानन्द दैवकरणि

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थों में यज्ञ का उद्देश्य निम्नलिखित रूप में प्रकाशित किया है:-

१. जनता नाम मनुष्यों का समूह है, इसी के लिए यज्ञ होता है और संस्कार किये द्रव्यों का होम करने वाला जो विद्वान् मनुष्य है, वह भी आनन्द को प्राप्त होता है, क्योंकि जो मनुष्य जगत् का जितना उपकार करेगा, उसको उतना ही ईश्वर की व्यवस्था से सुख प्राप्त होगा। इसलिये यज्ञ का अर्थवाद यह है कि अनर्थ दोषों को हटा के जगत् में आनन्द बढ़ाता है। परन्तु होम के द्रव्यों का उत्तम संस्कार और होम के करने वाले मनुष्यों को होम करने की श्रेष्ठ विद्या अवश्य होनी चाहिये। सो इसी प्रकार के यज्ञ करने से सबको उत्तम फल प्राप्त होता है, विशेष करके यज्ञकर्त्ता को, अन्यथा नहीं।

......जब होम से वायु, जल, ओषधि आदि शुद्ध होते हैं, तब सब जगत् को सुख और अशुद्ध होने से सबको दु:ख होता है। इससे इनकी शुद्धि अवश्य करनी चाहिये।

......दुर्गन्ध से वायु और वृष्टि जल का दोषयुक्त होना सर्वत्र देखने में आता है सो यह दोष ईश्वर की सृष्टि से नहीं, किन्तु मनुष्य ही की सृष्टि से होता है। इस कारण से उसका निवारण करना भी मनुष्यों को ही उचित है। ....ईश्वर ने मनुष्यों को यज्ञ करने की आज्ञा दी है, इसको जो नहीं करता, वह भी पापी होके दु:ख का भागी होता है।

......जहाँ जितने मनुष्य आदि के समुदाय अधिक होते हैं, वहाँ उतना ही दुर्गन्ध भी अधिक होता है, वह ईश्वर की दृष्टि से नहीं, किन्तु मनुष्यादि प्राणियों के निमित्त से ही उत्पन्न होता है। ......इससे क्या आया कि जब वायु और वृष्टिजल को बिगाड़ने वाला सब दुर्गन्ध मनुष्यों के निमित्त से उत्पन्न होता है, तो उसका निवारण करना भी उनको ही योग्य है। .....इससे सबके उपकार के लिये यज्ञ का अनुष्ठान भी उन्हीं को करना उचित है।

.... जो सुगन्ध आदि युक्त द्रव्य अग्नि में डाला जाता है, ...वह द्रव्य दुर्गन्धादि दोषों का निवारण करने वाला अवश्य होता है। फिर उससे वायु और वृष्टि जल की शुद्धि के होने से जगत् का बड़ा उपकार और सुख अवश्य होता है, इस कारण से यज्ञ को करना ही चाहिये।

.....जो होम के परमाणु युक्त शुद्ध वायु है, सो पूर्वस्थित दुर्गन्ध वायु को निकाल के उस देशस्थ वायु को शुद्ध करके रोगों का नाश करने वाला होता है और मनुष्यादि सृष्टि को उत्तम सुख को प्राप्त कराता है।

.....जो वायु सुगन्ध्यादि परमाणुओं से युक्त होम द्वारा आकाश में चढ़ के वृष्टि जल को शुद्ध कर देता है और उससे वृष्टि भी अधिक होती है, क्योंकि होम करके नीचे गर्मी अधिक होने से जल भी ऊपर अधिक चढ़ता है। शुद्ध जल और वायु के द्वारा अन्नादि ओषधि भी अत्यन्त शुद्ध होती हैं। ऐसे प्रतिदिन सुगन्ध के अधिक होने से जगत् में नित्यप्रति अधिक-अधिक सुख बढ़ता है। यह फल अग्नि में होम करने के बिना दूसरे प्रकार से होना असम्भव है। इससे होम का करना अवश्य है।

.....सो वेदमन्त्रों के उच्चारण से यज्ञ में तो उस (ईश्वर) की प्रार्थना सर्वत्र होती है, इसलिये सब उत्तम कर्म वेदमन्त्र से ही करना उचित है। .....(वेद मन्त्रों से) अन्य के पाठ में यह प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता। ईश्वर के वचन से जो सत्य प्रयोजन सिद्ध होता है, सो अन्य के वचन से कभी नहीं हो सकता। क्योंकि जैसा ईश्वर का वचन सर्वथा भ्रान्ति रहित सत्य होता है, वैसा अन्य का नहीं।

वेदमन्त्रों का करके अग्निहोत्र से लेके अश्वमेध पर्यन्त सब यज्ञों की शिल्पविद्या और उसके साधनों की सम्पत्ति अर्थात् प्राप्ति होती और कर्मकाण्ड से लेके मोक्षपर्यन्त सुख मिलता है, इसी हेतु से उन (वेदमन्त्रों) का नाम देवता है।

(-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वेदविषयविचार)

.....जो केशर, कस्तूरी आदि सुगन्धि; घृत-दुग्ध आदि पुष्ट; गुड़-शर्करा आदि मिष्ट; बुद्धि, बल तथा धैर्यवर्द्धक रोगनाशक पदार्थ हैं, उनका होम करने से पवन और वर्षाजल की शुद्धि से पृथिवी के सब पदार्थों की जो उत्तमता होती है, उसी से सब जीवों को परमसुख होता है। इस कारण अग्निहोत्र करने वाले मनुष्यों को उस उपकार से अत्यन्त सुख का लाभ होता है और ईश्वर उन पर अनुग्रह करता है। ऐसे लाभों के अर्थ अग्निहोत्र का करना अवश्य उचित है।

(-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, पञ्चमहायज्ञविषय)

..... दूसरा अग्निहोत्र कर्म दोनों सन्धिवेला अर्थात् सूर्योदय के पश्चात् और सूर्यास्त के पूर्व अग्निहोत्र करने का समय है।

.......प्रश्न- होम से क्या उपकार होता है?

उत्तर - सब लोग जानते हैं कि दुर्गन्धियुक्त वायु और जल से रोग, रोग से प्राणियों को दु:ख और सुगन्धित वायु तथा जल से आरोग्य और रोग के नष्ट होने से सुख प्राप्त होता है।

www.thearyasamaj.org

...... जिस मनुष्य के शरीर से जितना दुर्गन्ध उत्पन्न हो के वायु और जल को बिगाड़कर रोगोत्पत्ति का निमित्त होने से प्राणियों को दु:ख प्राप्त कराता है, उतना ही पाप उस मनुष्य को होता है। इसलिये उस पाप के निवारणार्थ उतना सुगन्ध वा उससे अधिक, वायु वा जल में फैलाना चाहिये।

.....इसीलिये आर्यवरशिरोमणि महाशय, ऋषि, महर्षि, राजे, महाराजे लोग बहुत-सा होम करते और कराते थे। जब तक इस होम का प्रचार रहा, तब तक आर्यावर्त्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था, जो अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाये। (-सत्यार्थप्रकाश, तृतीयसमुल्लास)

जो अग्नि में प्रात: काल में होम किया जाता है, वह हुत द्रव्य सायंकाल पर्यन्त और जो सायंकाल में होम होता है, वह हुत द्रव्य प्रात:काल तक वायु शुद्धि द्वारा सुखकारी होता है।

अग्निहोत्र से वायु-वृष्टि, जल की शुद्धि होकर औषधियाँ शुद्ध होती हैं। शुद्ध वायु का श्वासास्पर्श, खान-पान से आरोग्य, बुद्धि, बल, पराक्रम बढ़ के धर्मार्थ, काम, मोक्ष का अनुष्ठान निर्विघ्नता से पूरा होता है। इसीलिये इसको देवयज्ञ कहते हैं कि यह वायु आदि पदार्थों को दिव्य कर देता है। (-सत्यार्थप्रकाश, चतुर्थसमुल्लास)

यज्ञ उसको कहते हैं..... अग्निहोत्रादि जिनसे वायु, वृष्टि, जल, औषधि की पवित्रता करके सब जीवों को सुख पहुँचाना, उसको उत्तम समझता हूँ।

(-स्वमन्तव्या-मन्तव्यप्रकाश)

.......होम आदि से तत्काल मुक्ति नहीं मिल सकती, प्रत्युत यह तो शारीरिक सुख और सांसारिक आनन्द तथा परोपकार के साधन हैं और ऐसा ही समस्त ऋषि मुनि मानते चले आये हैं। इससे स्पष्ट प्रकट है कि अग्निहोत्र आदि यज्ञों के अनुष्ठान से जल, वायु की शुद्धि और उसके द्वारा सुख होता है। (-पत्र- विज्ञापन पृष्ठ ८९७)

पुष्टि, वधर्न, सुगन्ध-प्रसार और नैरोग्य ये चार उपयोग होम अर्थात् हवन करने से होते हैं। ये लाभ उपदिष्ट रीति से होम होने पर ही होते हैं।

....सुवृष्टि और वायुशुद्धि होम-हवनादि से होती है, इसलिये होम करना चाहिये। ....सुगन्धित द्रव्यों के दहन से ब्रह्माण्ड वायु की दुर्गन्धि का नाश होता है। इस हवन के कारण जो सुगन्ध उत्पन्न होता है उस सुगन्ध के सम्मुख वायु के सब दुष्ट दोष दूर होकर नैरोग्य उत्पन्न होता है।

...... (यज्ञ से) वायु और जल की दुर्गन्धि नष्ट होकर उनमें शुद्धि और पुष्टिवर्धनादि गुण बढ़ने से सब चराचरों को सुख होता है ..... होम-हवन से वायु शुद्ध होकर सुवृष्टि होती है। उससे शरीर नीरोग और बुद्धि विशद होती है, विद्या प्राप्त होती है अर्थात् स्वर्ग प्राप्ति-सुख प्राप्ति होती है।

.....(२० जुलाई सन् १८७५) इन दिनों होम के न्यून होने से बारम्बार वायु बिगड़ रही है, सदा विलक्षण रोग उत्पन्न होते जाते हैं। (-उपदेशमंजरी सप्तम उपदेश)

उपर्युक्त विस्तृत विवरण से यह स्पष्ट है कि यज्ञ का वास्तविक ध्येय वायु, जल, औषधि की शुद्धि और रोगों की निवृत्ति से आरोग्य एवं सुख की प्राप्ति है। यह यज्ञ प्रात: सायं ही करना चाहिये। इस यज्ञ से वृष्टि अधिक होने से अन्नादि भी अधिक उत्पन्न होते हैं। ये यज्ञ वेदमन्त्रों से ही करने चाहियें।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की इस स्पष्ट व्याख्या को न मान कर अनेक विद्वान् सामान्य लोगों की धार्मिक भावनाओं को उत्तेजित करके तथा उनकी श्रद्धा का अनुचित लाभ उठाकर यह घोषणा करते रहते हैं कि यज्ञ करने से केवल तीन घण्टे में जीवन की निराशा, दारिद्र्य, घृणा आदि विकृतियाँ दूर होकर जीवन उमंगों और बहारों से भर जायेगा, जिससे सुखद अहसास हो।

एक महात्मा का दावा है कि १९६ घण्टे तक अहर्निश (लगातार) शारदीय यज्ञ करने से असीम सुख व सौभाग्य मिल जायेगा।

इस प्रकार के लुभावने और आकर्षक विज्ञापनों द्वारा वैदिक धर्म की आड़ में कराये जा रहे इन यज्ञों के अधिकारियों को यह विदित नहीं है कि सीमित कर्म का फल 'असीमित' कैसे मिल सकता है? इसी प्रकार परमेश्वर का नाराज अथवा प्रसन्न होना जो बतलाते हैं, वे भी सिद्धान्तहीन बात करते हैं। क्योंकि परमेश्वर इन विकारों से सर्वथा शून्य है। रात्रि में यज्ञ करना भी असुरीवृत्ति का परिचायक है। रात्रि में यज्ञ करने से शीतल वायु के संयोग से सुगन्ध ऊपर बादलों तक न जाकर नीचे ही घूमता रहता है। अग्नि की उष्णता से जो पदार्थ सूक्ष्म हो गये हैं वे सूर्य की किरणों और वायु के संयोग से दूर-दूर तक फैल जाते हैं। इसलिये रात्रि में यज्ञ करने का विधान कहीं भी नहीं मिलता। इसी हेतु से रात्रि में यज्ञ करना वैज्ञानिक पद्धति से भी उपयुक्त नहीं है।

इस प्रकार के यज्ञों से इसके आयोजकों को लाभ अवश्य हो जाता है। थोड़े-से यज्ञिय प्रसाद वितरण के नाम पर धनिकों की जेबें खाली कराने का यह धार्मिक आडम्बर अशोभनीय और निन्दा के योग्य है।

ऋतुपरिवर्तन के समय शरीरों में प्राय: करके रोग होने की सम्भावना रहती है, उसके निवारणार्थ ग्रीष्म, वर्षा और शरद् ऋतु के प्रारम्भ में विशेष औषधीय सामग्री के द्वारा यज्ञ किये जाते हैं। धार्मिक विद्वानों और राजाओं का यह

www.thearyasamaj.org

कर्त्तव्य है कि ऐसे समय में जनकल्याण हेतु उपदेश और आदेश के द्वारा यज्ञादि शुभ कर्म कराते रहें।

महर्षि दयानन्द जी से पूर्व यज्ञों के नाम पर बहुत पाखण्ड फैला हुआ था, इसलिये उन्होंने यज्ञ में होने वाले जगड्वाल को दूर करके अतिसुविधाजनक यज्ञ प्रणाली का विधान कर दिया है। इस विषय में वे लिखते हैं:-

[वेदिरचन, प्रणीता, प्रोक्षणी और चमसादि पात्रों का स्थापन, दर्भ का रखना, यज्ञशाला का बनाना और ऋत्विजों का वरण] आदि यह सब विधान यज्ञ में अवश्य करना चाहिये। परन्तु इस प्रकार से प्रणीता पात्र रखने से पुण्य और इस प्रकार रखने से पाप होता है इत्यादि कल्पना मिथ्या ही है। किन्तु जिस प्रकार करने में यज्ञ का कार्य अच्छा बने, वही करना अवश्य है, अन्य नहीं।

(-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वेदविषयविचार)

......इसी तरह वेदी की एक आध ईंट यदि टेढ़ी बैठी कि मानो यजमान मरता है, इत्यादि कहना भी अप्रशस्त और निर्मूल है। यह सब लीला अर्वाचीन लोगों के मतलब सिद्धि की है। वे कहते हैं कि हम जो कहें उसे बछिया के बाबा की न्याईं सुनो, शंका मत करो, शंका करते ही तुम नास्तिक बन जाओगे, इत्यादि धमकियाँ धूर्त लोग देते रहते हैं। (-पूना प्रवचन, सातवाँ प्रवचन)

१. नये-नये कार्यक्रमों में अपनी-अपनी मति के अनुसार मन्त्रों का विनियोग करने की प्रथा समाप्त होनी चाहिये। ऋषिवर दयानन्द जी ने जिन अत्यावश्यक कर्मों में जो-जो विनियोग कर दिये, वे मानव जीवन की उन्नति और अभीष्ट की पूर्ति हेतु पर्याप्त हैं। लोगों को कर्मकाण्ड की आड़ में उलझाना अनुचित है। यदि नये-नये विनियोगों पर अंकुश नहीं लगाया गया तो पौराणिक काल का जगड्वाल पुन: प्रचलित हो जायेगा इससे जनता किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाती है। धर्म के नाम पर लोग पहले ही भीरु बने रहते हैं, उन्हें और अधिक जटिलता में फंसाना अप्रशस्त है। पौराणिक पद्धति से यज्ञ करने वाले अभी तक जगड्वाल में फंसे हुए हैं।

२. जितने अधिक कुण्डों द्वारा यज्ञ होगा, उतना ही वातावरण अधिक शुद्ध होगा। परन्तु बहुकुण्डीय यज्ञप्रक्रिया का सहारा लेकर तथा धर्मप्राप्ति का लोभ देकर अपनी जीविका करना श्रेयस्कर नहीं है। साथ ही ११, २१, ५१, १०१, ५०१, १००१ आदि इस प्रकार की संख्या युक्त यज्ञकुण्डों का निर्माण भी विशेष पुण्यप्राप्ति में सहायक नहीं है। जनसंख्यानुसार यज्ञकुण्डों की संख्या कितनी भी रक्खी जा सकती है। उक्त संख्यानुसार दान देना-लेना भी इसी प्रकार के धर्मभाव को उभार कर स्वप्रयोजन सिद्ध करना है।

३. अनेक दिनों तक होने वाले यज्ञों की प्रथा पुराकाल में थी, परन्तु वे यज्ञ दिन में ही होते थे, न कि रात्रि में। शतवार्षिक सहस्रवार्षिक आदि दीर्घ सत्रों का लेख पञ्चविंशब्राह्मण आदि वैदिक साहित्य और अष्टाध्यायी आदि में मिलता है। परन्तु महाभाष्यकार पतञ्जलि मुनि के समय यह प्रथा प्रचलित नहीं थी, केवल पुरातनग्रन्थों में लेख मात्र मिलता था।

४. वर्तमान में अश्वमेध और सोमयाग आदि के नाम से विद्वानों द्वारा जो यज्ञ कराये जा रहे हैं, वे केवल आडम्बर द्वारा धनहरण करने के लिए हैं। इन यज्ञों से वातावरण की सुगन्धि के अतिरिक्त अन्य कोई लौकिक वा पारलौकिक सुख एवं परमार्थ की उपलब्धि नहीं होती। इन यज्ञों का पुराकालीन स्वरूप विलुप्त हो चुका है। अब जिस विधि से ये यज्ञ सम्पन्न किये जा रहे हैं, वह विधि समय एवं धन का दुरुपयोग करने वाली है। इससे किसी का वैसा कल्याण नहीं होता, जिसका प्रलोभन देकर अतिरंजित रूप से प्रचारित किया जाता है। राष्ट्ररक्षा का नाम अश्वमेध है।

५. किसी विशेष संख्या को ही आधार मानकर पुण्यप्राप्ति की लालसा से किया जाने वाला यज्ञ अथवा जप भी विडम्बना मात्र है। इसी भाँति पुरश्चरण करना-कराना भी पुण्यदायक नहीं हो सकता।

६. वेद पारायण द्वारा यज्ञ करने में कोई दोष नहीं है। इससे जल, वायु की शुद्धि के अतिरिक्त वेदों की रक्षा, ईश्वर स्तुति प्रार्थना-उपासना भी होती है। शेष विघ्ननिवारण, सफलतादायक, शत्रु पर विजय आदि की कामना से किये गये यज्ञ निष्फल ही होते है। यदि दो विरोधी लोग एक-दूसरे की पराजय हेतु यज्ञ करेंगे तो सफलता किसे मिलेगी। इस प्रकार के आयोजनों से जनता में भ्रम ही फैलता है, क्योंकि ऐसे यज्ञों का प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष सम्बन्ध उस कर्म से नहीं होता, जिसे निमित्त मानकर ये यज्ञ किये जाते हैं।

७. तीन घण्टे अथवा एक दो दिवस में यज्ञ के द्वारा विश्व में शान्ति स्थापना करने की बात भी निर्मूल है। ऐसे आडम्बर से अपना प्रचार, महत्त्वकांक्षा और धनलाभ की प्राप्ति तो हो ही जाती है। जीवन में सद्गुणों को धारण करके तदनुसार आचरण और ईश्वरभक्ति करने से ही शान्ति प्राप्त की जा सकती है।

८. यज्ञ में वस्त्र विशेष धारण करने ही से पुण्य मिलता हो, यह बात भी निरर्थक है। विदेशों में जहाँ पीले और सूती वस्त्र नहीं मिलते, क्या उनको यज्ञ करना ही नहीं चाहिये? इसी प्रकार तिलक, मौली बन्धन, १०८ मनकों की माला लेकर गणना करते हुए आहुति प्रदान करना अथवा जप करना आदि का धर्माधर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है, किन्तु जनता की श्रद्धा बढ़ाने और पुण्य प्राप्ति का लोभ

www.thearyasamaj.org

देकर आडम्बर चला रक्खे हैं। भगवान् के साथ भी दुकानदारी चलाकर मोलभाव करने जैसी पद्धति है यह तिलक आदि के लिए ऋषि जी कहते हैं..... चन्दन, तिलक, कंठी ये सब पाखण्ड सम्प्रदायी लोगों का द्रव्य हरण करने के लिए है। (उपदेश मंजरी पाँचवाँ उपदेश)

९. ब्रह्मा द्वारा यज्ञ के पश्चात् यजमानों और अन्य उपस्थित सभी लोगों की पंक्ति बनवाकर आशीर्वाद रूप में फल आदि देकर बदले में चढ़ावे में रुपये रखवाते जाना आदि भी अनुचित है। इससे ब्रह्मा और वेदपाठियों की प्रवृत्ति लोभमयी हो जाती है। यजमान अपनी श्रद्धा और सामर्थ्यानुसार जो दक्षिणा दे सकता है, वह निष्कामभाव से ले लेनी चाहिये। इसी भांति यज्ञ से पूर्व दक्षिणा निश्चित करवा लेना अथवा यज्ञान्त में दक्षिणा को न्यून मानकर झगड़ा करना आदि भी ठीक नहीं है। वैदिक धर्म कर्मफल प्रधानता वाला है, इसमें आशीर्वाद लेकर अपने को कृतकृत्य मानना अथवा जीवन में सफलता मिल जाना मानना स्वयं को भ्रम में रखना है। कोरे आशीर्वाद से किसी का कल्याण नहीं हो सकता, किन्तु विद्वानों से सत्कर्मों की प्रेरणा पाकर तदनुसार फलप्राप्ति हेतु कर्म भी करना चाहिये।

दर्श (अमावस्या), पौर्णमास, राजसूय, वाजपेय, अग्निष्टोम, अर्क, अश्वमेध आदि यज्ञों का नामनिर्देशपूर्वक विधान अथर्ववेद के ११वें और १५वें काण्ड में मिलता है। वर्षेष्टि, पुत्रेष्टि, नवशस्येष्टि आदि का विधान पुरातन ऋषियों ने वेदादिग्रन्थों से अन्वेषण करके बनाया है। पुत्रेष्टि का अर्थ है- जिस कर्म से पुत्र के शरीर और बुद्धि में दृढ़ता आती हो, उसका प्रमुखता से विचार करना। पुत्रेष्टि (पुत्र प्राप्ति हेतु यज्ञ) करने से पुत्र प्राप्ति नहीं हो सकती। पुत्र की कामना वाला व्यक्ति यज्ञ करके पुंस्त्वशक्ति वृद्धि हेतु औषध सेवन करेगा अथवा यज्ञपूर्वक नियोग की आज्ञा समाज से लेगा, तभी पुत्र प्राप्ति सम्भव है। पुत्र की अप्राप्ति में शारीरिक अक्षमता भी कारण होती है।

वर्षेष्टि में कैर (करीर) की समिधाओं से बादल उत्पन्न करके जलवर्षण में समर्थ मूत्रल औषधियों की आहुति से आकाश में वर्षा योग्य वातावरण उत्पन्न किया जाता है। इस भाँति करने से यज्ञ द्वारा वृष्टि हो जाती है।

आर्य विद्वानों द्वारा ऐसा यत्न किया जाना चाहिये कि जिससे यज्ञ की विसंगतियाँ दूर हो सकें तथा यज्ञों में होने वाले आडम्बरों से जनता को सावधान किया जा सके। यज्ञों के द्वारा पुण्य प्राप्ति आदि का प्रलोभन देकर धन प्राप्ति करने की प्रथा भी बन्द होनी चाहिये।

निदेशक-पुरातत्त्व संग्रहालय, गुरुकुल झज्जर, हरियाणा

"ईश-गुरु-प्रभा"

- देवनारायण भारद्वाज 'देवातिथि'

ओमेश बृहस्पति श्रुति-रञ्जन।
गुरुदेव आपका अभिनन्दन।।

वेद ब्रह्म को ब्रह्म देव से,
गुरुदेव बृहस्पति ने पाया।
गुरुदेव बृहस्पति ने श्रुति को,
सब शिष्य सृष्टि में बिखराया।
संसृति में छाया कृति-कञ्चन।
गुरुदेव आपका अभिनन्दन।।१।।

हो गये शिष्य विद्वान् विप्र,
श्रुति का करते विस्तार नित्य।
शुभ शिक्षा दान दक्षता से,
हो जन-जन का सत्कार हित्य।
हर ओर प्रभा का हो मञ्जन।
गुरुदेव आपका अभिनन्दन।।२।।

यह वर्च प्रभा बन तपस तेज,
नि:श्रेय अभ्युदय आभा दे।
ऐश्वर्य बढ़ाती जाये यह,
सर्वत्र सुरक्षा शोभा दे।
हो नयनों में नोहिल अञ्जन।
गुरुदेव आपका अभिनन्दन।।३।।

पुरुषार्थ करे यश का वर्धन,
शुभ कर्मों में संयुक्त करे।
पोषक पय की विज्ञान धरा,
पीयूष ओज संवृक्त करे।
सुख सौरभ रस का हो सिञ्चन।
गुरुदेव आपका अभिनन्दन।।४।।

वर्च तेज भग यश पय रसरी,
पान कराये गुरु की गगरी।
सेवा सौरभ सुभग मञ्जुला,
हो उठे सुशोभित नर-नगरी।
हो तन-मन-धन का मति मञ्जन।
गुरुदेव आपका अभिनन्दन।।५।।

प्रभुवर से पाया गुरुवर ने,
गुरुवर से शिष्यों ने पाया।
स्वाध्याय नित्य व्याख्यानों से,
विमल हर्ष-उत्कर्ष बढ़ाया।
कृति कर नर गहते जय गुञ्जन।
गुरुदेव आपका अभिनन्दन।।६।।

'वरेण्यम्' अवन्तिका १, रामघाट मार्ग, अलीगढ़, उ.प्र.-२०२००१

www.thearyasamaj.org

वैचारिक क्रान्ति हेतु सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र प्रचार-प्रसार की भव्य योजना

विचार किसी भी देश, समाज व जाति की अमूल्य निधि (सम्पत्ति) है। जिसके पास में ठोस श्रेष्ठ विचार नहीं या फिर विचार को फैलाने के साधन नहीं हैं या फिर जो व्यक्ति, समाज व राष्ट्र अपने विचारों की अवहेलना करते रहते हैं, उनका अस्तित्त्व भी एक दिन समाप्त प्राय: हो जाता है। आज हर सम्प्रदाय, समाज, समूह व देश अपने विचारों का प्रचार-प्रसार बड़ी प्रबलता से हर क्षेत्र में व हर साधन से कर रहे हैं, लेकिन काफी समय से आर्यसमाज में वैचारिक शिथिलता देखी जा रही है। इस शिथिलता को दूर करने का मात्र एक ही उपाय है कि हम सभी आर्य जन ऋषि दयानन्द सरस्वती कृत **अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का प्रचार नये शिक्षित लोगों में करें।** इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर सभा के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक मेला २०१४ दिल्ली में प्रचार-प्रसार की योजना तैयार की गयी है।

सत्यार्थप्रकाश ही क्यों?-१. यदि कोई व्यक्ति, समाज, समूह, संस्था या राष्ट्र एक ग्रन्थ (पुस्तक) पढ़कर विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो यह सत्यार्थप्रकाश से ही सम्भव है। २. आज के दूषित वातावरण में वैदिक वाङ्मय को ठीक-ठीक जानने हेतु, पढ़ने-पढ़ाने हेतु प्रथम सत्यार्थप्रकाश और महर्षि के अन्य ग्रन्थों का पढ़ना-जानना अत्यन्त आवश्यक है। ३. दर्शनशास्त्र, इतिहास, भारतीय परम्परा, कर्त्तव्य, धर्म-अधर्म, उचित-अनुचित, न्याय-अन्याय, सत्य-असत्य तथा मानवता आदि क्या हैं? यह सारी जानकारी सत्यार्थप्रकाश से प्राप्त होती है व होगी। ४. पाखण्ड, मक्कारी, कुरीतियों व बुराइयों का नाश भी सत्यार्थप्रकाश से सम्भव है। ५. सत्यार्थप्रकाश व ऋषि के अन्य ग्रन्थों की उपस्थिति में कोई विधर्मी अपनी शेखी नहीं मार सकता तथा किसी भी हिन्दू को बहकाकर विधर्मी नहीं बना सकता। ६. सत्यार्थप्रकाश के प्रभाव ने न जाने कितनों का जीवन ही बदल डाला। सत्यार्थप्रकाश के जोड़ की दूसरी पुस्तक दुर्लभ है, जिसमें ज्ञान का अमूल्य खजाना भरा पड़ा है। इसलिए इसका प्रचार-प्रसार अनिवार्य है, जरूरी है। **योजना का विवरण निम्न प्रकार का होगा**-१. सत्यार्थप्रकाश हिन्दी में आकार लगभग ६०० पृष्ठ व साईज डमई आकार में होगी। लागत मूल्य ५०/- रुपये प्रति पुस्तक। २. ऋषि जीवन चरित्र हिन्दी में लगभग २०० पृष्ठ व साईज डमई आकार में। लागत मूल्य ३०/- रुपये प्रति पुस्तक। ३. सत्यार्थप्रकाश हिन्दी से इतर (अन्य) भाषियों के लिए सी.डी.या डी.वी.डी. के माध्यम से उपलब्ध करवाया जायेगा। इस डी.वी.डी. में लगभग १८ भाषाओं में सत्यार्थप्रकाश होगा। लागत मूल्य लगभग २५/- होगा। ४. संक्षिप्त ऋषि जीवन चरित्र अंग्रेजी में। लागत मूल्य १०/- रुपये।

नोट-यह साहित्य वैचारिक क्रान्ति के लिए व वैदिक धर्म प्रचार-प्रसार के लिए गैर आर्यसमाजी सज्जनों व संस्थानों आदि को नि:शुल्क या अल्प मूल्य में वितरित किया जायेगा। साहित्य का ठीक-ठीक उपयोग हो व योग्य शिक्षित विचारवान् व्यक्तियों तथा संस्थानों तक पहुँचे इसके लिए अच्छी वितरण व्यवस्था की जाएगी। योग्य प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं का चयन कर कार्य में नियुक्त किया जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति, संस्था आदि से एक फार्म भरवाया जायेगा, जिसमें उनका पूर्ण पता सम्पर्क आदि हो। जिससे भविष्य में परिणाम का मूल्यांकन किया जा सके। ग्रन्थों की प्रामाणिकता, शुद्धता व साज-सज्जा सुन्दरता का विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस प्रचार-प्रसार योजना का उद्देश्य सत्यार्थप्रकाश व महर्षि के जीवन-चरित्र के प्रचार-प्रसार के माध्यम से मानव मात्र का कल्याण करना है। यह प्रचार-प्रसार मुख्य रूप से शिक्षित गैर आर्यसमाजी लोगों के लिए होगा। यह कार्य पूर्णरूप से महर्षि के मन्तव्यों के अनुरूप हो इसका विशेष ध्यान रखा जायेगा। इस कार्य की सफलता के लिए सभी आर्यजनों से, समाजों से व संस्थानों से निवेदन है कि इस महान् कार्य में तन-मन-धन से अपना सहयोग करने व अपने इष्ट मित्रों को भी सहयोग करने की प्रेरणा करें।

नोट-अपना आर्थिक सहयोग आप परोपकारिणी सभा अजमेर के नाम प्रेषित करते समय **सत्यार्थप्रकाश प्रचार-प्रसार शीर्षक** अवश्य लिखें। धन प्रेषित करने हेतु आप चैक, ड्राफ्ट व सीधे राशि सभा के बैंक खाते में जमा करवाकर जमा पर्ची की प्रतिलिपि प्रेषित कर देवें या फिर ईमेल, दूरभाष द्वारा सूचित कर सकते हैं। धन्यवाद।

खाता धारक का नाम-**परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक खाता संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आइ**, पावर हाऊस के सामने, जयपुर रोड़, अजमेर।
बैंक खाता संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091
email : psabhaa@gmail.com

नोट : इस योजना हेतु दिया गया दान आयकर की धारा ८० जी के अन्तर्गत कर मुक्त होगा।

सम्पर्क : मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

www.thearyasamaj.org

पं. युधिष्ठिर मीमांसक का वंश परिचय एवं व्यक्तित्व

- डॉ. सुजीता शर्मा

यह लेख महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय द्वारा कराये गये शोध कार्य का भाग है। डॉ. सुजीता जी ने पं. युधिष्ठिर मीमांसक के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर खोज पूर्ण कार्य कर के शोध उपाधि प्राप्त की है। इस कार्य के लिए परोपकारी परिवार शोधकर्त्री को बधाई देता है। -सम्पादक

राजस्थान की वीर प्रसविनी भूमि ने महाराणा सांगा, महाराणा प्रताप तथा वीर दुर्गादास जैसे पराक्रमी शूरवीरों को तो जन्म दिया ही है, यह धरती सन्तों, महात्माओं, विद्वानों तथा शास्त्रमर्मज्ञ विपश्चितों से भी शून्य नहीं रही। यहाँ सन्त दादू तथा भक्तिमती मीरा बाई ने जन्म लिया, तो स्वामी दयानन्द के वैदिक सन्देश को सर्वत्र प्रसारित करने वाली स्वामी नित्यानन्द ब्रह्मचारी के धर्मप्रचार तथा गुरुकुल चित्तौड़गढ़ की स्थापना करने वाले यतिवर स्वामी व्रतानन्द की संस्कृत-शिक्षा के प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। इसी प्रदेश के अजमेर नगर के दीवान बहादुर हरविलास शारदा ने अनेक ग्रन्थों का प्रणयन कर राजस्थान के इतिहास को लिपिबद्ध किया, तो इसी अजमेर जिले के एक ग्राम के निवासी पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक ने वेद, वेदांग, दर्शन, धर्मशास्त्र आदि की शास्त्रीय विद्याओं में पारगामी वैदुष्य प्राप्त कर मरुभूमि के सांस्कृतिक-साहित्यिक वैभव को उजागर किया।

वैदिक परम्परा से अध्ययन करने वाले वैयाकरणों की परम्परा में पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक एक महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व के धनी विद्वान् हैं। उन्होंने अथक परिश्रम से पाणिनीय व्याकरण में निष्णात होकर वैदिक साहित्य का अनुशीलन, व्याकरण का इतिहास, अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त श्रौत यज्ञों का अनुशीलन ही नहीं किया अपितु आपने आर्यसमाज और स्वामी दयानन्द विषयक ग्रन्थों का सारगर्भित सम्पादन एवं ऐतिहासिक विवेचन भी किया है। जीवन पर्यन्त मीमांसक जी वेदवाणी पत्रिका के सम्पादक बने रहे। आर्यसमाज की स्थापना के बाद महर्षि दयानन्द प्रणीत व्याकरण शिक्षण पद्धति और वेद-भाष्य की ऋषि परम्परा का अवगहन उनकी विशेषता रही है।

आर्ष ग्रन्थों के मर्मज्ञ पण्डित युधिष्ठिर जी मीमांसक को व्याकरण शास्त्र के विद्वानों ने 'आधुनिक पाणिनि' कहकर गौरवान्वित किया तो याज्ञिक कर्मकाण्ड के सनातनी विद्वानों ने उन्हें 'कलियुग के धर्मराज युधिष्ठिर' कहकर सम्बोधित किया है।

मीमांसक जी के वंश का मूल स्थान पंजाब में सरस्वती नदी के किनारे था। कालान्तर में इनके पूर्वज अजमेर के निकट बिरक्चयावास ग्राम में आकर बसे। श्री छाजू जी जो पहले डेह (बीकानेर) में आकर बसे थे। उन्हीं के वंशजों में टीकू जी के ५ पुत्र थे जिसमें से रामो जी, दामो जी तथा सुन्दर जी डेह से निकलकर बिरक्चयावास ग्राम (जिला अजमेर) में पहुँचे। इनमें रामो जी अपने ननिहाल चले गये जो बाद में पुनः बिरक्चयावास आये जबकि दामो जी यहीं रहे और सुन्दर जी निकट लीड़ी में चले गये। दामो जी के वंशों में गौरलाल जी के घर में युधिष्ठिर जी का जन्म हुआ।

पं. युधिष्ठिर जी के पिता जी के विवाह के समय आयु सर्विस बुक के अनुसार १९ वर्ष और उनके कहे अनुसार २० वर्ष की थी और उनकी माता जी, जिनका नाम जमना बाई (यमुना बाई) था, की आयु लगभग १३ वर्ष की थी।

पं. युधिष्ठिर जी के पिता के दोनों पैर जन्म से टेढ़े थे तथा परिवार में खेती होती थी। पिताजी को गाँव की पाठशाला में शिक्षा के लिए भेजा गया बाद में वे निकट कस्बा राजगढ़ पहुँचे और उच्च शिक्षा के लिए उनके पिता जी गौरीलाल अजमेर आ गए। बाद में उन्होंने क्विंस कॉलेज, बनारस से उच्च शिक्षा प्राप्त की। अजमेर में ही स्वामी दयानन्द के भाषण सुनने से वे आर्यसमाज की ओर प्रवृत्त हुए।

पं. युधिष्ठिर जी ने अपने जीवन के विषय में लिखा है कि, स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज के अमृतसर में बहुत भक्त थे। उन्होंने स्वामी जी से कहा कि हम यहाँ एक गुरुकुल खोलना चाहते हैं, आप इस विषय में सहयोग दें। स्वामी जी ने इसे स्वीकार कर लिया और आर्यसमाज के लोगों ने अमृतसर से लगभग ४ मिल दूर 'मजीठा रोड' पर 'गण्डासिंहवाला' गाँव के श्री अमरसिंह जी से गुरुकुल के लिये भूमि देने को कहा। श्री अमरसिंह जी भी आर्य विचारों के थे। उन्होंने गाँव के समीप ही अपनी कई बीघा भूमि आश्रम के लिये दे दी।

आर्ष ग्रन्थों के पठन-पाठन में विशेषज्ञ पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु ने आर्ष पद्धति से ही युधिष्ठिर मीमांसक को शिक्षा प्रदान की। यहीं उन्होंने अष्टाध्यायी को कंठस्थ किया, महाभाष्य पढ़ा।

www.thearyasamaj.org

आचार्य वेदव्रत जी ने कहा है कि गुरुवर्य श्री जिज्ञासु जी के पदचिह्नों का अनुगमन करते हुए आर्ष वाङ्मय की अनुपम सेवा पण्डित मीमांसक जी ने की। वे सरस्वती के वरदपुत्र थे। वे आजीवन सरस्वती की आराधना करते रहे हैं। आर्ष वाङ्मय के पारंगत विद्वान् और गम्भीर चिन्तक थे। श्री पण्डित जी का वैदिक साहित्य में अव्याहत प्रवेश था। उनके विषय प्रतिपादन में शास्त्रीयता एवं विचारों में मौलिकता है, ऐसा श्री पण्डित जी के द्वारा लिखित ग्रन्थों के अध्ययन से ज्ञात होता है।

आचार्य वेदव्रत के अनुसार आर्ष परम्परा के अद्वितीय भास्कर महामहोपाध्याय पदवाक्यप्रमाणज्ञ पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक को हमारी इस परम्परा को भारतवर्ष तथा विश्वभर के संस्कृतज्ञों में शिखर पर ले जाने का श्रेय प्राप्त होता है। इस बात का प्रमाण आर्ष परम्परा, पौराणिक जगत् तथा विदेशी विद्वान् हैं जो कि प्रत्येक गम्भीर विषय में पण्डित जी को ही प्रमाण रूप में प्रस्तुत करते हैं।

मीमांसा शास्त्र का वैदिक कर्मकाण्ड के साथ सम्बन्ध है। समस्त वैदिक वाङ्मय अर्थात् वेद, उसकी शाखाएँ, ब्राह्मण, आरण्यक, श्रौतगृह्यसूत्र आदि वैदिक कर्मकाण्ड का प्रतिपादन करते हैं। इन्हीं विविध ग्रन्थों के विवादास्पद वचनों की संगति लगाने के लिये मीमांसा शास्त्र का प्रवचन हुआ है।

मीमांसक जी का लाहौर में सम्पर्क पं. भगवद्दत्त जी से हुआ। पं. भगवद्दत्त जी उन दिनों 'भाटी दरवाजा' के बाहर रामबाग के साथ वाली सड़क पर किराये के मकान में रहते थे। इसके पास ही गुरुकुल विभाग का प्रसिद्ध 'गुरुदत्त भवन' था। पं. भगवद्दत्त जी डी.ए.वी. कॉलेज के लालचन्द पुस्तकालय के अध्यक्ष थे। कुछ काल पश्चात् पं. जिज्ञासु जी ने मीमांसक जी को भी अपने साथ लाहौर ले जाना आरम्भ किया। दोनों की शास्त्र चर्चा से उन्हें बहुत लाभ हुआ और उस समय की पं. भगवद्दत्त जी की संगति से इनके भीतर शोध प्रवृत्ति जागृत हुई जो उत्तरोत्तर बढ़ती गई।

पं. मीमांसक संस्कृत शिक्षा को समर्पित थे। पं. जिज्ञासु जी के दामाद श्री पं. पट्टाभिराम शास्त्री पास में ही रहते थे। वे मीमांसाशास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे। अत: शेष शाबरभाष्य का अध्ययन उनसे पूरा किया।

पं. युधिष्ठिर जी ने १९३० में महाभाष्य पूर्ण किया और इसी वर्ष लाहौर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसे पं. युधिष्ठिर जी ने अपनी आँखों से देखा। इसी वर्ष लाहौर में 'ऑल इण्डिया ऑरियन्टल कान्फ्रेन्स' में भी भाग लिया। जयपुर में पं. मधुसूदन ओझा जो जयपुर रियासत के राजगुरु थे, से भी (अध्ययन) प्राप्त किया। काशी में १९३१-१९३४ तक पूज्य चिन्न स्वामी से मीमांसा दर्शन की शिक्षा ली। मीमांसा के अध्ययन के उपरान्त ही युधिष्ठिर जी ने 'मीमांसक' नाम को स्वीकार किया। उन्होंने पं. पट्टाभिराम शास्त्री मीमांसा शास्त्र के ज्ञाता से भी शाबरभाष्य का अध्ययन किया। काशी प्रकर्ष में ही न्याय, वैशेषिक और सांख्य का दर्शन प्राप्त किया। काशी रहते ही विभिन्न पुस्तकालयों का क्रम उनके व्यक्तित्व को निहारता रहा संस्कृत कॉलेज के सरस्वती भवन के अध्यक्ष पं. मंगलदेव शास्त्री का सान्निध्य प्राप्त हुआ।

डॉ. देवेन्द्र सिंह सोलंकी के अनुसार सन् १९३५ ई. में काशी से पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक जी रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा स्थापित आश्रम जो कि लाहौर के रावी पार बारहदरी के समीप स्थित था, आ गये। वहाँ भारतीय प्राचीन इतिहास के मर्मज्ञ विद्वान् एवं 'भारतवर्ष का बृहद् इतिहास' के यशस्वी लेखक स्व. पण्डित भगवद्दत्त जी के सान्निध्य में प्राचीन इतिहास एवं अनुसन्धान कार्य में शिक्षा प्राप्त की। २६ दिसम्बर सन् १९३५ को मीमांसक जी के पिता जी का एक संदिग्ध मुसलमान डॉक्टर द्वारा गलत इन्जैक्शन लगाने के कारण देहावसान हो गया। उस समय आपके पिता जी इन्दौर राज्य के चित्तौड़गढ़ से ३० किमी. दूर नन्दवाई नामक ग्राम में अध्यापन कार्य करते थे। पिता की मृत्यु के दु:ख से दु:खी होते हुए भी धैर्यपूर्वक स्वाध्याय में रत मीमांसक जी ने अप्रैल १९३६ में विरजानन्दाश्रम लाहौर से विधिवत् स्नातक की उपाधि अर्जित की।

१९३६ को युधिष्ठिर जी का समावर्तन संस्कार हुआ। आचार्य वेदव्रत के अनुसार पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक जी का विवाह अजमेर के पं. भगवानस्वरूप न्यायभूषण की पालित कन्या से हुआ। यह कन्या शाहपुरा के श्री पं. मूलचन्द जी त्रिगुणातीत की सुता थी। २ जून १९३६ को ११ व्यक्तियों की बारात के साथ विवाह सम्पन्न हुआ। पत्नी का पूर्व में नाम नर्मदाबाई था बाद में नाम परिवर्तन कर यशोदाबाई रख दिया गया। श्रद्धेय पण्डित जी अत्यन्त नम्र, सरल, उदारचित्त, अभिमानरहित व्यक्तित्व के धनी थे। शास्त्र की गहराई तक पहुँचाने वाला आपका अपरिमित ज्ञान आपके व्यक्तित्व की शोभा थी। व्याकरण, संस्कृत साहित्य एवं संस्कृत भाषा का पूर्ण अधिकार था।

विवाह के बाद वैदिक यन्त्रालय में ही ५० रुपये मासिक पर कार्य मीमांसक को मिला। सितम्बर १९३८ में उनके ज्येष्ठ पुत्र बृहस्पति का जन्म हुआ। लाहौर में ही रामलाल कपूर ट्रस्ट में ३५ रु. में सेवा कार्य किया।

उनके प्राचीन वैदिक विशाल वाङ्मय के गहन अध्ययन और पाण्डित्य के कारण उनको अनेक प्रादेशिक और केन्द्रीय शासन द्वारा पुरस्कृत किया गया। अन्त में

www.thearyasamaj.org

हिन्दी के सर्वोच्च पुरस्कार 'विश्वभारती' से भी उनको सम्मानित किया गया। ऐसे पं. युधिष्ठिर मीमांसक सचमुच महापण्डित थे।

देश के विभाजन के पश्चात् मीमांसक जी लाहौर छोड़ चुके थे। कुछ समय काशी में रहे बाद में अजमेर आ गये फिर यहीं उन्होंने बिहारीगंज में दुकान खोली। आर्य साहित्य मण्डल में भी उन्होंने काम किया। यहीं ७ अक्टूबर १९४९ को उनकी पुत्री सुनीति का जन्म हुआ। रामलाल कपूर ट्रस्ट की मासिक वृत्ति पर कार्य करना प्रारम्भ किया, रहने का मकान ट्रस्ट की ओर से मिलता था।

प्रो. डॉ. सत्येन्द्र कुमार आर्य के अनुसार-

(१) सन् १९३६ से १९४२ तक लाहौर में रावीपार 'विरजानन्द साङ्गवेदविद्यालय' में अष्टाध्यायी से महाभाष्य पर्यन्त पाणिनीय व्याकरण और निरुक्तशास्त्र का अध्यापन कार्य किया।

(२) सन् १९४३ से १९४५ पर्यन्त अजमेर में रहते हुये स्वतन्त्र रूप से महाभाष्य और निरुक्त आदि का अध्यापन किया।

(३) सन् १९४६ से ३१ जुलाई १९४७ तक पुन: लाहौर के पूर्व निर्दिष्ट साङ्गवेदविद्यालय में अध्यापन कार्य किया।

(४) देश विभाजन के पश्चात् सन् १९४७ से १९५० तक अजमेर में रहते हुए स्वतन्त्र रूप से व्याकरण शास्त्र का अध्यापन करते रहे।

(५) सन् १९५० से १९५५ के आरम्भ तक लाहौर से स्थानान्तरित 'विरजानन्द साङ्गवेदविद्यालय' अपर नाम 'पाणिनि महाविद्यालय' मोती झील, वाराणसी में अध्यापन कार्य किया।

(६) सन् १९५५ से १९५९ के आरम्भ तक देहली में स्वतन्त्र रूप से शास्त्री और संस्कृत एम.ए. के छात्रों को पढ़ाते रहे।

(७) सन् १९५९ के मई मास से सन् १९६१ तक 'महर्षि दयानन्द स्मारक महाविद्यालय' टंकारा में शोधकार्य किया।

(८) सन् १९६२ से १९६६ तक अजमेर में अष्टाध्यायी, महाभाष्य, निरुक्त, पूर्वमीमांसा तथा कात्यायन श्रौतसूत्र आदि का स्वतन्त्र रूप से अध्यापन करते रहे।

(९) सन् १९६७ में केन्द्र द्वारा भुवनेश्वर (ओडिशा) में स्थापित 'सान्ध्य संस्कृत महाविद्यालय' में तीन मास तक आचार्य पद पर कार्य किया। यहाँ का जलवायु स्वास्थ्य के अनुकूल न होने से यह स्थान छोड़ना पड़ा।

(१०) जुलाई १९६७ से श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट बहालगढ़ (सोनीपत, हरियाणा) में पाणिनि महाविद्यालय में यथासम्भव अध्यापन कार्य करते रहे।

वेदाचार्या सूर्या देवी जी ने स्पष्ट किया है कि अतिशय पारिवारिक जिम्मेदारियों एवं आर्थिक कठिनाइयाँ होने पर भी पूज्य पण्डित जी विद्या से कभी विमुख नहीं हुए। सभी प्रकार की जिम्मेदारियों का वहन करते हुए वे कुछ घण्टे काम किये बिना शान्त नहीं बैठते थे। पढ़ना लिखना उनके स्वभाव का एक अंग हो गया था। बीमार एवं रुग्ण होने पर भी कभी कमर में बेल्ट बान्धकर या कभी सिर पर पट्टी बान्धकर उन्हें लिखते पढ़ते देखा जा सकता था। मैंने कई बार यह भी अनुभव किया कि अस्वस्थता एवं परेशानी के जिस बिन्दु पर साधारण व्यक्ति को आराम करने के सिवाय और कुछ भी नहीं सूझता है- वहीं परम पूज्य पण्डित जी पीड़ा को सहकर भी अपनी उत्कट मानसिक शक्ति के कारण अपने कार्य में संघर्ष करते हुए जुट जाते थे।

प्रसिद्ध विद्वान् डॉ. भवानीलाल भारतीय जी ने कहा है कि पण्डित युधिष्ठिर जी के लेख तथा शोध कार्य को सर्वत्र सराहा गया। १९७६ में उन्हें भारत के राष्ट्रपति ने संस्कृत के विद्वान् के रूप में सम्मानित किया। सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय काशी ने १९८९ में महामहोपाध्याय की उपाधि से सत्कृत किया तथा १९८५ में आर्यसमाज सान्ताक्रुज मुम्बई ने ७५वीं वर्षगाँठ पर उन्हें नवस्थापित वेद वेदांग पुरस्कार से सम्मानित किया तथा ७५ हजार रुपये सम्मान रूप में प्रदान किये।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पं. युधिष्ठिर मीमांसक का व्यक्तित्व निश्चय अत्यन्त प्रबुद्ध एवं गौरवमय रहा है। उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन में शुचिता का पालन किया वहीं, वैदिक साहित्य, व्याकरण, दर्शन, शिक्षण, सम्पादन आदि सभी क्षेत्रों में अद्वितीय प्रतिभा का परिचय दिया है।

- म.नं. ५१/१५०९, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर

जब युद्धकर्म में चार वीर अवश्य हों उनमें से एक तो वैद्यकशास्त्र की क्रियाओं में चतुर सब की रक्षा करने हारा वैद्य, दूसरा सब वीरों को हर्ष देने वाला उपदेशक, तीसरा शत्रुओं का अपमान करने हारा और चौथा शत्रुओं का विनाश करने वाला हो, तब समस्त युद्ध की क्रिया प्रशंसनीय होती है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.४४

www.thearyasamaj.org

मृत्युञ्जय

- रमेश मुनि

पौराणिक जगत् में 'त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्' इस मन्त्र को महामृत्युञ्जय मन्त्र के नाम से जाना जाता है। मन्दिरों के पुजारी लोग किसी कष्ट, क्लेश या दु:ख होने पर पीड़ित व्यक्ति को समझाते हैं आप पर ग्रह की साढे सती है जिससे आप दु:खी हैं। इसके दूर होने तक दु:ख दूर नहीं होगा अत: महामृत्युञ्जय मन्त्र का एक लाख बार हमारे से पाठ करवाओ फिर ग्रह शान्त होंगे और दु:ख दूर हो जाएँगे। आज से लगभग १० वर्ष पहले पुजारी १० हजार रुपये इस मन्त्र का पाठ करने की फीस लेते थे। दु:खी यजमान का पाठ करेंगे पुरोहित जी अर्थात् 'भूखा राम है, भोजन दिया जाए श्याम को'।

यह यजुर्वेद के तीसरे अध्याय का साठवाँ मन्त्र है जो निम्न है-

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्,
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुत:।।

यजु. ३/६०

यजुर्वेद के इस मन्त्र के दो भाग हैं जो उद्देश्यपूर्वक हैं। पूर्वार्ध उत्तरार्ध का और उत्तरार्ध पूर्वार्ध का पूरक है। पूर्वार्ध में मुमुक्षु की पुकार है और उत्तरार्ध में एक नववधु के हृदय की पुकार है। मन्त्र के दूसरे भाग में पतिवेदनम् और दूसरे चरण के 'इतोमुक्षीय मामुत:' से पता चलता है कि कोई कन्या 'त्र्यम्बकं'= परमात्मा=आचार्य=पिता से कह रही है कि मुझे पितृकुल (माता, पिता, भाई) के बन्धन से छुड़ा दें पतिकुल से नहीं क्योंकि पतिबन्धन मेरे लिए सौभाग्यप्रद है, अमृत है।

कन्या पितृकुल से छूट पतिकुल से बन्धना चाहती है उसी प्रकार से मुमुक्षु की भी पुकार है- हे ब्रह्म आप मुझे मृत्यु बन्धन से, जन्म-मरण के चक्कर से छुड़ा दें और अमृत बन्धन में बान्ध आपके नित्य आनन्द का पान करवाएँ। अर्थात् मुमुक्षु का मृत्युबन्धन कन्या के पितृबन्धन के समान और पतिकुल का बन्धन अमृत बन्धन के समान है। जिस प्रकार कन्या पतिबन्धन को चाहते हुए भी पितृबन्धन को बुरा नहीं मानती क्योंकि पतिबन्धन के बाद भी कन्या अपने माता-पिता, भाई आदि के पास फेरा डालने आती रहती है कुछ दिनों के लिए। कार्य पूरा होने पर खुशी से पतिकुल में लौट जाती है। सदा रहने के लिए नहीं आती। इसी प्रकार से मुमुक्षु को भी मृत्यु बन्धन कन्या के पितृबन्धन के समान समझना चाहिए। क्योंकि मुक्ति का काल पूरा होने पर जीव मृत्यु बन्धन में (पितृकुल) फेरा डालने आता है उसका वास्तविक घर मोक्ष ब्रह्म धाम ही है। यहाँ अपना कार्य शीघ्र पूरा करके उसे वापिस लौटना है। हमें यह मृत्युबन्धन हमारे रक्षक परम पिता परमात्मा ने ही दिया है, रक्षा के लिए दिया है। इसे पूरा करने के लिए मानव शरीर, ज्ञान, बल और बुद्धि, मन, इन्द्रियाँ आदि साधन दिए हैं।

मुमुक्षु को और कन्या को समझ लेना चाहिए कि उन्होंने प्रार्थना की है छुड़ा कर नए बन्धन में बाँधने की और उपमा दी है कि जिस प्रकार खरबूजा पक कर अपनी बेल से बिना किसी सहायता के स्वयं अलग हो जाता है उसी प्रकार हमें भी छुड़ा दो। अर्थात् जगत् से या पितृकुल छूटने के लिए पकना भी आवश्यक है कच्ची अवस्था में नहीं क्योंकि कच्चा फल किसी काम का नहीं होता- रस हीन, गन्ध हीन, अरूप स्वयं सड़ जाए और दूसरों को भी सड़ा दे। मुमुक्षु, कन्या की प्रार्थना है- हम 'त्र्यम्बकम्'= ब्रह्म, अर्यमा, न्यायाधीश, आचार्य, पिता की 'यजामहे' पूजा करते हैं प्रार्थना करते हैं- जिस प्रकार 'सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्' शुभगन्ध वाला और पुष्टि को बढ़ाने वाला खरबूजा पक कर अनायास अपनी डाल से अलग हो जाता है, छूट जाता है उसी प्रकार मुझे भी मृत्यु के अविद्या के बन्धन से (कन्या के लिए-पितृबन्धन से छूड़ा पतिबन्धन में बाँधे) अनायास छुड़ा दें किन्तु 'अमृतात्' आनन्द रस रूप विद्या से अलग मत करो।

इस प्रार्थना से भाव निकला कि बन्धन भी उपादेय वस्तु है क्योंकि जरा मृत्यु के बन्धन से छूटने की प्रार्थना है वहाँ अमृत से जुड़े रहने की भी प्रार्थना है अर्थात् कोई बन्धन ऐसा है जिससे जुड़ा रहना अभीष्ट है सर्वत: मुक्त होना नहीं। क्योंकि जिस प्रकार देह धारण बन्धन है उसी प्रकार से देहातीत अवस्था भी एक प्रकार का बन्धन है। पहला बन्धन दु:ख मिश्रित है दूसरे बन्धन में शुद्ध आनन्द ही आनन्द है।

किन्तु मृत्युञ्जय करने के लिए मृत्यु बन्धन से छुटकारा माँगा है किन्तु खरबूजे की उपमा कहती है- खरबूजा छूटता है पूरा पकने पर, इससे पहले वासना रूपी डाल उसे जकड़े रहती है, मजबूत होती है, उसे काटना पड़ता है

www.thearyasamaj.org

फिर भी डाल का फल वाला हिस्सा फल के साथ चिपका रहता है। पूरा पकने पर डाल पूरी स्वयं अलग हो जाती है फल पर मात्र उसका चिह्न मिलता है। इसी प्रकार से मृत्यु बन्धन से पूरी तरह छूटने के लिए पकना आवश्यक है और पकने के लिए बन्धना भी आवश्यक है। अत: खरबूजे की बेल की तरह जीवात्मा को मर्त्यबेल (सृष्टि) से बन्ध कर पकना आवश्यक है। पक कर जब अपनी सभी वासनाओं को क्लेशों-अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश, दोषों- काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या आदि के जो संस्कार जन्म-जन्म से मन में इकट्ठे किए हैं उन्हें दग्धबीज करना ही मर्त्यबेल से जीव का पकना है और पक जाने पर शरीर छोड़ने पर ब्रह्म के पास जैसे बालक माता की गोद में जाता है, जाएगा। इसलिए मोक्ष के लिए पकना और पकने के लिए बन्धन आवश्यक है फिर ही मृत्यु जय की जा सकती है।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

ऋषि उद्यान में अब संस्कृत सीखने का अवसर

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में अब सभी आर्य-जनों के लिए देव भाषा=संस्कृत-भाषा सीखने का अवसर उपलब्ध है। यह प्रशिक्षण नि:शुल्क होगा। संस्कृत-भाषा को सीखने के इच्छुक शीघ्र सम्पर्क करें।

-: सम्पर्क :-

डॉ. निरञ्जन साहू,

दूरभाष - ०९४१४७०९४९४

उपाध्याय भैरुलाल,

दूरभाष - ०९८२९१७६४६०

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर, राजस्थान

ई-मेल द्वारा परोपकारी नि:शुल्क

परोपकारी के पाठकों को प्रसन्नता होगी कि अब परोपकारी ई-मेल द्वारा भी भेजी जा रही है। परोपकारिणी सभा की वेब-साइट पर तो परोपकारी पहले से ही नि:शुल्क उपलब्ध है। विश्व में कहीं भी कोई भी इसे वेब-साइट पर पढ़ सकता है। इसके साथ ही अब यह सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है कि परोपकारी आपके पास ई-मेल द्वारा पहुँच जाये। इससे यह पत्रिका शीघ्र व अधिक सुन्दर रूप में आप तक पहुँच सकेगी। आप जहां भी रहें, कभी भी पढ़ना चाहें, यह आपके पास रहेगी। डाक की अव्यवस्था से छुटकारा मिल सकेगा। यह आपको नियमित मिलती रहेगी। इससे रासायनिक रंगों व कागज का उपयोग भी कम होगा, खर्च भी घटेगा। अत: पाठकों से अनुरोध है कि **कृपया अपना ई-मेल पता सभा को ई-मेल से भिजवा देवें।** आप जिन इष्ट-मित्रों, परिजनों व संस्थाओं को परोपकारी भिजवाना चाहते हैं, उनके ई-मेल पते भी भिजवा देवें, उन्हें भी यह नि:शुल्क भेज दी जायेगी। ई-मेल- psabhaa@gmail.com

-व्यवस्थापक

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

www.thearyasamaj.org

''प्राचीन-भारतीय-संस्कृतीयम्'' काव्य के निर्माता

डॉ. हरिश्चन्द्र रेणापुरकर

- डॉ. प्रशस्यमित्र शास्त्री

डॉ. हरिश्चन्द्र रेणापुरकर महाराष्ट्र के सुप्रसिद्ध संस्कृत भाषा के कवि एवं लेखक है। आज ८६ वर्ष की परिपक्व आयु में भी आप निरन्तर लेखन कार्य में निरत हैं तथा सामयिक संस्कृत पत्र-पत्रिकाओं में आज भी आप की काव्य रचना निरन्तर प्रकाशित होती रहती है।

विगत २००८ ईशवीय वर्ष में उनका लगभग ३५० पृष्ठों का एक काव्य प्रकाशित हुआ है जिसका नाम है ''प्राचीन-भारतीय-संस्कृतीयम्''। इस काव्य को सत्रह सर्गों में विभक्त किया गया है तथा इसमें प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के मौलिक तथ्यों एवं सार्वकालिक व्यवस्थाओं के सम्बन्ध में उनके महत्त्व को प्रतिपादित करने हेतु विषयों पर व्यापक विचार प्रस्तुत किया गया है। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के मूल बिन्दुओं जैसे- पुरुषार्थ-चतुष्टय, निष्काम-कर्मयोग, आत्मतत्त्व-निरूपण, शिक्षा, यज्ञ, वर्णाश्रम व्यवस्था, संस्कार आदि के सम्बन्ध में अत्यन्त वर्णनात्मक सरल शैली में उसके महत्त्व के प्रतिपादक तत्त्वों का निरूपण प्रस्तुत किया गया है।

वास्तव में यह ग्रन्थ २००४ में भारतीय विद्या भवन मुम्बई द्वारा पहले केवल मूल संस्कृत भाषा में ही प्रकाशित किया गया था। बाद में इसकी उपादेयता एवं सामान्यजनों के लिए इसमें अभिरुचि तथा इसके महात्म्य को परिचित कराने के लिए प्रथम प्रकाशन के चार वर्षों बाद हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित किया गया है।

लेखक का जीवन परिचय- ग्रन्थ के लेखक श्री हरिश्चन्द्र जी रेणापुरकर का जन्म महाराष्ट्र के लातूर जिले के रेणापुर ग्राम में १७ सितम्बर सन् १९२४ ईस्वी को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा रेणापुर ग्राम में हुई थी पुनः माध्यमिक शिक्षा लातूर नगर में हुई। विश्वविद्यालय स्तरीय शिक्षा के लिए आप औरंगाबाद गए तथा आपने संस्कृत भाषा में एम.ए. परीक्षा आन्ध्रप्रदेश के हैदराबाद से उत्तीर्ण की।

श्री हरिश्चन्द्र जी ने जीवन यापन के लिए शिक्षा विभाग में ही अध्यापन की वृत्ति को स्वीकार किया तथा कर्णाटक प्रदेश के गुलबर्गा, शिमांगा, चिकमगलूर आदि नगरों में संस्कृत विभाग में स्नातक एवं स्नातकोत्तर कक्षाओं को पढ़ाते हुए अन्त में प्राचार्य के रूप में १९८० में अवकाश प्राप्त करके गुलबर्गा में ही निवास कर रहे हैं।

रचनाएँ- इनकी रचनाओं में सर्वप्रथम एक हजार श्लोकों से भी अधिक का पहला काव्य संग्रह- ''काव्योन्मेष:'' नाम से १९८९ में भारतीय विद्या भवन मुम्बई द्वारा प्रकाशित किया गया।

इसी प्रकार आपकी कविताओं का एक संग्रह- ''काव्य-निस्यन्द:'' नाम से प्रकाशित हुआ जिसमें लगभग ७०० श्लोक संगृहीत है। 'काव्योद्यानम्' नाम से आपका एक अन्य काव्य संग्रह भी प्रकाशित है जिसमें एक हजार से भी अधिक पद्य संगृहीत किये गए हैं।

श्री हरिश्चन्द्र जी रेणापुरकर भारतीय राजनीति की तत्कालिक समस्याओं पर सदैव अपनी लेखनी से संस्कृत भाषा को सामयिक एवं लोकप्रिय बनाने के लिए काव्य रचना करते रहते हैं जिसका प्रमाण यह है कि जब देश में अयोध्या में विवादित राम मन्दिर को धराशायी किया गया उसके दो मास के भीतर ही ''राममन्दिरविवाद:'' नाम से ४०० से भी अधिक श्लोकों का एक काव्य प्रकाशित हो गया। इसी प्रकार भारतीय राजनीति में लम्बे समय तक केन्द्र बिन्दु बने रहने वाली श्रीमती इन्दिरा गाँधी के उत्थान एवं पतन को ध्वनित करने वाली लगभग २३० श्लोकों की एक लघु काव्य रचना 'इन्दिरा-पतनोत्थानम्' नाम से प्रकाशित हो गई।

लेखक की अन्य विशेषता- श्री हरिश्चन्द्र जी रेणापुरकर की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि आज भी संस्कृत भाषा में अनेक कवि जहाँ अपनी रचनाओं के लिए प्राचीन घटनाओं का पौराणिक आख्यानों का आश्रय लेते हैं वहीं श्री रेणापुर जी तत्कालिक समसामयिक घटनाओं एवं वृत्तान्तों का आश्रय लेकर संस्कृत काव्य की श्री वृद्धि करते हुए संस्कृत भाषा को वर्त्तमान से जोड़ने का प्रयास कर रहे हैं।

डॉ. रेणापुरकर जी बहुभाषा विद् हैं। उनका लेखन केवल संस्कृत में ही सीमित नहीं है प्रत्युत उनकी कुछ रचनाएँ हिन्दी एवं मराठी में भी प्रकाशित हैं। वे हिन्दी, संस्कृत एवं अंग्रेजी के साथ ही मराठी, कन्नड़, उर्दू एवं तेलुगु भाषा के भी अच्छे जानकार हैं। संस्कृत लेखकों में ऐसे लोग दुर्लभ ही हैं जो इतनी भाषाओं को जानते हैं तथा इनके अनेक भाषाओं में लेखन कार्य भी करते हैं।

भारतवर्ष में इस समय संस्कृत की जितनी भी मासिक,

www.thearyasamaj.org

पाक्षिक या त्रैमासिक पत्रिकाएँ निकल रही हैं उनमें कहीं न कहीं, कभी न कभी श्री रेणापुरकर जी की रचनाओं का दर्शन प्रायः होता रहता है। भारत वर्ष या विश्व राजनीति में यदि कोई कभी भी घटना चक्र ऐसा घटित हो जाता है जो राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण या चर्चित होता है तो यह असम्भव है कि उस घटना चक्र पर श्री रेणापुरकर जी की लेखनी न उठे। इतनी आयु में भी उनके अन्दर अब भी लिखते रहने की प्रवृत्ति हमारे जैसे लेखकों के लिए जीवनी शक्ति के रूप में प्रेरणा देती रहती है।

'प्राचीन-भारत-संस्कृतीयम्' रचना की विशेषता- आलोच्य 'प्राचीन-भारत-संस्कृतीयम्' नामक उनकी रचना प्राचीन भारतीय संस्कृति के भौतिक तत्त्वों का केवल प्रतिपादन मात्र ही नहीं है प्रत्युत उनमें आधुनिक वैज्ञानिक विचारों का समावेश भी है। जैसे वे यज्ञ की चर्चा करते हुए जहाँ उसकी विशेषता बताते हैं वहीं 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' ऐसे वाक्यों के आधार पर यज्ञों में पशु हिंसा का घोर विरोध करते हुए प्राचीन वैदिकों द्वारा क्रियमाण याज्ञिक पशु हिंसा के सन्दर्भ में लिखते हैं-

वेदे स्पष्टं कथितमसकृत् ''पाहि नूनं पशुत्वमय,
त्वं मा हिंसीः पशुमिति'' वयं नैकवारं पठामः।
एवं हिंसारहितमहिते पूतयज्ञे पशूनाम।
धूर्तैर्हिंसा रुचिर-रसना-स्वादपूर्त्त्यै कृताऽभूत्।।

इस पुस्तक में प्राचीन भारत वर्ष के अनेक वैज्ञानिक विषय जैसे- ज्योतिर्विज्ञान, आयुर्विज्ञान, गणित, विमान विज्ञान आदि की भी चर्चा है जिससे हमारी प्राचीन संस्कृति गर्व करने योग्य प्रतीत होती है तथा उसकी समृद्धि हमें आकृष्ट करती है। अधिक न लिखते हुए हम इस लघु लेख में एक वयोवृद्ध, आज भी संस्कृत भाषा के लिए बद्धपरिकर तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण सम्पन्न उदारवादी संस्कृत लेखक के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त कर सकते हैं जो लगभग मौन रहकर अपनी साधना में लीन है। श्री रेणापुरकर जी को महाराष्ट्र सरकार में **महाकवि कालिदास संस्कृत साधना पुरस्कार** से अलंकृत भी किया है। इस प्रकार के लेखक की चर्चा करना वास्तव में कृतज्ञता व्यक्त करना है।

ई. सन् २०११ में श्री रेणापुरकर जी को राष्ट्रपति ने उन्हें संस्कृत भाषा में उनके योगदान को लक्षित करके उन्हें सम्मान-पत्र के साथ पाँच लाख रुपये की धन राशि भी प्रदान की है जिसके वे पूर्णतया सत्पात्र हैं। प्रसिद्ध 'गुञ्जारव' नामक त्रैमासिक संस्कृत पत्रिका के सम्पादक डॉ. देवी प्रसाद खरवंडीकर जी ने उनके प्रति यह पद्य ठीक ही लिखा है-

यदायुर्वाग्देवी चरण कमलाराधमपरम्,
यदीयं साहित्यं रसिकजनतोषं च कुरुते।
यदीयं पाण्डित्यं भवति सरसोन्मेष सबलतम्,
हरिश्चन्द्रो रेणापुरकरकवीन्द्रः स जयति।।

- बी-२९, आनन्द नगर (मेन रोड),
रायबरेली-२२९००१ (उ.प्र.)

द्रोणाचार्य - प्रतिफलम्

- डॉ. वेदप्रिय प्रचेता

भुवन विदिते द्रोणो धनुर्विद्याधुरन्धरः
भवान् वासी गुरुग्रामे ब्राह्मणकुलदीपकः
कुरून् पाठयितुं तीर्थं कुरूणां कुलमाययौ
गुर्वाश्रयावछिन्नेहार्यावर्तस्य च नाशकः
पुरातनकुलादर्शः गुरोः पठति बालकः
पुष्णाति बालमाचार्यः न च भवति बाह्यतः
निर्जनकानने छात्राः भूमौ सदैव शेरते
पठन्ति तपसा सर्वे वीर्यं रक्षन्ति सर्वदा
आचार्यगरिमभ्रष्टः कौरवाणां गृहेगते
युद्धबीजं स एवासीत् कुस्नातकसुयोधनः
पक्षधरः कुरूणां त्वं बभूव पाण्डवशोषकः
पाण्डवं विहाय द्रोणस्तु कुरुद्वारेण मानितः
न ददुः पाण्डवभूभागं कुलघातक कौरवाः
तेषां परस्परं वैरं महाभारतकारणम्
दुर्जनामुदिता सर्वे लब्धुमखण्डंभूमिम्
उभयसंधिवार्ता हि नीत्वा गतः जनार्दनः
श्रूयतां भगवन् प्राह देशद्रोहीसुयोधनः
किञ्चदपि न दास्यामि विना युद्धेन माधव
गुरुग्रामे स्वकुट्यामपाठिष्यत् भवान् यदि
स्वदेशदुर्दशाद्य नाभविष्यत् कदापि यत्
असंस्कृतेन तेनैवाक्रियत या क्षतिस्तदा
पूरयितुं न शक्येत यत्नशतैरपि

- गौतम नगर-११९

www.thearyasamaj.org

मन की शान्ति के लिए

- सुधा सावन्त

कभी-कभी जब समय पर काम पूरा हो जाता है तो हम बड़े चैन से कहते हैं- काम पूरा हुआ, मन को शान्ति मिली। कभी-कभी परेशानियों, समस्याओं से टकराते हुए हम अनुभव करते हैं कि हमारा मन अशान्त है और कोई भी काम हम ठीक से नहीं कर पा रहे हैं। इस तरह हम देखते हैं कि हमारे कर्म में और हमारे मन में गहरा सम्बन्ध है। सुचारू रूप से काम चलता रहे इसके लिए मन का शान्त होना बहुत जरूरी है। हम मन को शान्त रखने के लिए कुछ न कुछ उपाय करते भी रहते हैं। कुछ कहते हैं, सुबह उठो, खुली हवा में प्राणायाम-व्यायाम करो, मन शान्त रहेगा। कुछ धार्मिक प्रवृत्ति के लोग ईश्वर का भजन पूजन करते हैं। काम में व्यस्त लोग कुछ समय निकाल कर घूमने-फिरने निकल जाते हैं, कि काम में परिवर्तन मन को शान्ति देगा। कुछ लोग चित्रकला, संगीतकला या कोई अन्य कला को अपना कर मन की शान्ति खोजते हैं। उन्हें इसमें बहुत कुछ सफलता भी मिलती है, परन्तु पूरी तरह मन शान्त रहे, प्रसन्न रहे, इसके लिए हम क्या करें।

आईए, देखें, यह मन है क्या? क्या काम करता है? कैसे इसे शान्त रखें और अपने वश में रखें? मन को समझने के लिए और मन की कार्य प्रणाली को समझने के लिए यदि हम योगेश्वर श्री कृष्ण द्वारा दिये गए रथ का उदाहरण समझने का प्रयास करें तो अच्छा होगा। श्री कृष्ण कहते हैं शरीर रूपी रथ में आँख, नाक, कान आदि ज्ञानेन्द्रियाँ घोड़ों के समान हैं, मन इन घोड़ों को वश में रखने वाली लगाम है, बुद्धि सारथी के रूप में है।

शरीर रूपी रथ में आत्मा यात्री के समान है अर्थात् हमारे शरीर को इधर-उधर ले जाने के लिए ज्ञानेन्द्रियाँ घोड़ों के समान हैं। हम कुछ अच्छा देखते हैं उस ओर आकर्षित हो जाते हैं। नाक अच्छी सुगन्ध के प्रति, कान अच्छे स्वर के प्रति, जीभ अच्छे भोजन के प्रति, त्वचा कोमल स्पर्श के प्रति शरीर को खींचती है लेकिन बुद्धि इन्हें हर तरफ अन्धाधुन्ध भागने से रोकती है। मन की लगाम लगानी पड़ती है। बुद्धि मन को समझाती है- व्यर्थ चीजों के पीछे भागना उचित नहीं है। मन यदि बुद्धि के वश में रहे तो शान्त रहता है। यदि बुद्धि की बात न सुने तो अशान्त रहता है। इसलिए आवश्यक है कि हम मन पर बुद्धि का नियन्त्रण बनाए रखें। इससे मन शान्त रहेगा।

योगेश्वर श्री कृष्ण ने श्रीमद् भगवद्गीता में मन के विषय में एक बात और बताई है। अर्जुन ने जब यह प्रश्न किया कि मन को कैसे वश में करूँ? इसको वश में करना तो वायु को मुट्ठी में बन्द करने के समान है, तब श्री कृष्ण ने कहा था कि यह सत्य है कि मन चंचल है, किन्तु अभ्यास से वश में किया जा सकता है। साथ ही यदि सांसारिक वस्तुओं के प्रति लगाव कम हो, तो आसानी से वश में किया जा सकता है। श्री कृष्ण ने कहा था

अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।

साथ ही साथ हमारा लक्ष्य भी स्पष्ट होना चाहिए। जैसे विद्यार्थियों के लिए परीक्षा के दिनों में मन को शान्त व एकाग्र करना, कुछ-कुछ आसान हो जाता है। मन की शान्ति के लिए मन में सकारात्मक विचारों को हमें अधिक महत्त्व देना चाहिए। मन में नकारात्मक विचार मन को अशान्त बनाते हैं। इन्हें मन से दूर ही रखना चाहिए। जैसे पानी में यदि पत्थर डालें तो तरंगें सब से पहले पत्थर के गिरने की जगह पैदा होंगी और धीरे-धीरे उनका घेरा बढ़ता जाएगा, इसी तरह मन में उठने वाले नकारात्मक विचार भी पहले हमारे अपने मन को दु:खी करेंगे बाद में वे अन्य तक पहुँचेंगे। इसीलिए तो हम प्रतिदिन सुबह-शाम यही प्रार्थना करते हैं-

तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।

अर्थात् वही मेरा मन सब के प्रति अच्छे विचारों वाला हो। जब हम अपने मन से किसी के बारे में बुरा नहीं सोचेंगे, अपनी शक्ति को सकारात्मक और कल्याणकारी कामों में लगाएंगे तो हमारा मन भी शान्त और शक्तिशाली हो जाएगा....

१. तो इस तरह हमने देखा कि मन की शान्ति के लिए पहला उपाय है कि हम मन को एकाग्र करें, किसी भी काम में लगना है तो पूरे विश्वास के साथ, दृढ़ निश्चय के साथ काम करें। सफलता मिलेगी और शान्ति भी।

२. सन्तुलित व्यवहार करें। खाने-पीने में, सोने-जागने में, सन्तुलन रखें, इससे शरीर स्वस्थ रहेगा और स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन होगा।

३. हम स्वयं अपने मन को सकारात्मक विचारों से मजबूत करते रहें। थोड़ी असफलता मिलने पर भी निराशा को पास न आने दें। फिर से सुधार करते हुए काम आरम्भ करें।

४. अपने जीवन में आने वाली बाधाओं से घबराएँ नहीं, हम मान कर चलें कि बाधाएँ तो सभी के जीवन में आती हैं। श्री राम और श्री कृष्ण के जीवन में भी आईं थीं

www.thearyasamaj.org

लेकिन उन्होंने उन बाधाओं पर विजय पाई। इससे हमारा मनोबल ऊँचा होगा। हम भी लगन से काम करेंगे। सफलता भी मिलेगी व मन को शान्ति भी।

५. आज के जीवन में अपने से अधिक धनवान या बलवान को देख कर तुलना न करें। तुलना करने से मन में असन्तोष का भाव बढ़ता है, जो निराशा पैदा करता है। अपने काम सुधारें ताकि उन्नति हो सके।

६. अन्त में ईश्वर के न्याय में पूर्ण विश्वास रखें। मन को शान्ति मिलेगी।

७. परमपिता परमेश्वर को याद करते हुए यह मन्त्र सदा दोहराते रहें.....

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आसुव।।

अर्थात् हे ईश्वर! सब सुखों के दाता परमेश्वर, हमारे सब दुर्गुणों को हमसे दूर कर दीजिए और जो कल्याणकारी गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं वह सब हमको प्राप्त कराइए। ओ३म् शान्ति, शान्ति, शान्ति।

- उपवन, ६०९, सैक्टर २९, नोएडा-२०१३०३

स्पष्टवादिता-व्यवहार का मुख्य अंग

- सुकामा आर्या

अपने जीवन में व्यवहार करते समय जिन साधनों का उपयोग करते हैं उनमें मुख्यत: वाणी है। हम अपने विचारों को शब्दों का जामा पहनाकर दूसरों के सामने प्रस्तुत करते हैं। यह हम मनुष्यों को ईश्वर द्वारा प्रदत्त एक वरदान है। पशु-पक्षी अपनी अभिव्यक्ति इतनी स्पष्टता एवं सहजता से नहीं कर सकते। हमारे पास अपनी भावनाओं को, अपने विचारों को पेश करने का उत्तम, सरल माध्यम है।

व्यवहार में हमे स्पष्टवादी होना चाहिए क्योंकि जब हम अपनी बात स्पष्ट रखते हैं तो वह सत्य पर आधारित होती है, उसमें हमें किसी प्रकार की मिलावट, औपचारिकता करने की जरूरत नहीं पड़ती। इससे हमारा मानसिक सन्तुलन ठीक रहता है। उस पर अवांछित दबाव नहीं पड़ता है, क्या कहना है? क्या छुपाना है? यह विचार हमें दबावग्रस्त कर देता है। दूसरे व्यक्ति को भी वह विषय वस्तु स्पष्ट हो जाती है। उसका समय, प्रयास भी व्यर्थ नहीं जाता। इस तरह दोनों पक्ष लाभ में रहते हैं। यथासम्भव हमें अपनी बात स्पष्ट रूप से कहने और अपने व्यवहार में लाने का प्रयास करना चाहिए।

कई बार समस्या यह आती है कि सामने वाला व्यक्ति क्या समझेगा? यह जानना आवश्यक होता है। अगर वह आपके मानसिक स्तर का है या आपसे ऊँचे स्तर का है तो वह बात को ज्यों का त्यों समझेगा, इसे पसन्द करेगा और दोनों पक्षों का एक दूसरे के प्रति सम्मान, सद्भाव बना रहेगा। यही उत्तम सम्बन्ध होने का स्तर है, और प्रमाण भी है।

दूसरे पक्ष में अगर सामने वाला व्यक्ति आपको, आपकी भावनाओं को समझने में असक्षम है तो वहाँ कई बार द्वेष या विवाद खड़ा हो सकता है। क्योंकि स्पष्टवादिता, सत्यवादिता हर एक को स्वीकार्य नहीं होती। जिन लोगों ने अपने इर्द-गिर्द अपने अहं का काफी दायरा बना रखा है विभिन्न मुखौटे पहन रखे हैं उनके लिए स्पष्ट बात को सुन पाना स्वीकार्य नहीं होता है। ऐसे लोगों के साथ थोड़ी औपचारिकता की आवश्यकता पड़ती है, पर इस समय भी अपने मन में तनाव न लाएं। Save your mind at any cost किसी दूसरे के प्रति औपचारिकता निभाने में, अपनी झूठी श्रद्धा भाव, सम्मान भाव दिखाने में अपनी आन्तरिक स्थिति को मत डगमगाने दें। बाहर की गतिविधि, मानसिक स्थिति को प्रभावित न करे। ऐसा प्रयास रखना चाहिए। सत्य की परिधि में रहते हुए, सत्य का दामन पकड़े रखते हुए-हमें अपने व्यवहार में, वाणी में स्पष्टवादिता लाने का प्रयास करना चाहिए।

इसका एक मुख्य लाभ यह है कि हम अपने समय व दूसरे के समय का सदुपयोग कर रहे होते हैं। जलेबी की तरह गोल घुमाकर बात करने में हम दोनों पक्ष हानि उठाते हैं। फिर आपसी सम्बन्धों में संशय, अविश्वास भी पैदा हो जाते हैं जो सम्बन्धों में कटुता लाते हैं। मधुरता के साथ स्पष्टवादिता का प्रयोग किया जाए तो हम अपने मन को भी शान्त रख सकते हैं व दूसरों के प्रिय भी बने रह सकते हैं, मधुरता अवश्य रहनी चाहिए क्योंकि

कुदरत को नापसन्द है सख्ती ब्यान में,
इसीलिए तो दी नहीं हड्डी जुबान में।

यूँ भी जहाँ सम्बन्धों में आपसी विश्वास, प्रेम, स्नेह, वात्सल्य, आत्मीयता होती है, वहाँ मधुरता अपनी मज़बूत जड़ों के साथ विद्यमान होती ही है। तो भी जहाँ तक सम्भव होता है साधक सबके साथ स्पष्टवादी होते हुए भी माधुर्य सम्बन्ध रखने में ही अपनी भलाई, अपना लाभ देखता है। यह उचित भी है।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

www.thearyasamaj.org

पाखण्ड-खण्डन-आज की आवश्यकता

- प्रताप कुमार 'साधक'

देश और समाज को धर्म का वास्तविक स्वरूप बतलाने के लिए जब वेदज्ञ योगीराज ऋषि दयानन्द सरस्वती कार्य क्षेत्र में उतरे थे, तो सर्वप्रथम हरिद्वार में कुम्भ मेले पर 'पाखण्ड-खण्डिनी पताका' फहराई थी। आशय स्पष्ट था कि धर्म के सत्य स्वरूप को समझने के लिए पाखण्ड और अन्धविश्वास से मुक्ति पाना अनिवार्य है। यही दो ऐसे प्रदूषण हैं जो धर्म को सम्प्रदाय, मज़हब, पन्थ और मत में परिवर्त्तित कर देते हैं। इसीलिए महर्षि ने अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' में जहाँ दस समुल्लास वैदिक सिद्धान्तों पर लिखें, वहीं चार समुल्लासों में अन्धविश्वास और पाखण्ड-खण्डन पर लेखनी चलाई। यह सत्य ही है कि बिना अवतारवाद और मूर्तिपूजा से छुटकारा पाए ईश्वर के सच्चे स्वरूप को समझा नहीं जा सकता है और न उसकी उपासना ही की जा सकती है। इसी प्रकार दुष्कर्मों की क्षमा का मत स्वीकार करते हुए पापों से बचने का प्रयास नहीं किया जाएगा। चमत्कारों को स्वीकार करने से प्रकृति के अटल नियमों पर प्रश्न चिह्न लगेंगे और किसी मनुष्य को गुरु आदि मानकर उस पर अन्धविश्वास करने से धोखा ही खाना पड़ेगा। इस के अनेक उदाहरण हमारे सामने आते रहते हैं।

यदि हिन्दू समाज के बारे में विचार करें तो उपरोक्त बुराइयों के कारण ही आज भारत में बहुसंख्यक माना जाने वाला हिन्दू समाज अनेक सम्प्रदाय, मत, पन्थ में विभाजित होकर उपेक्षित और प्रताड़ित हो रहा है। देश या प्रदेश ही नहीं, एक ही हिन्दू परिवार के सदस्य अलग-अलग मतों के मानने वाले मिल जाएँगे। जिस (तथाकथित) धर्म के मानने वालों का एक इष्ट देव नहीं, एक धार्मिक पुस्तक नहीं, एक उपासना पद्धति नहीं, एक समान आहार नहीं, तो एक जैसे विचार क्यों कर हो सकते हैं? फिर विचारों की भिन्नता के रहते संगठन के स्थान पर विघटन, प्रेम और सौहार्द के स्थान पर द्वेष भाव तथा सहयोग के स्थान पर विरोध की भावना रहने पर कैसा आश्चर्य?

यह पूर्णत: सत्य है कि धर्म हिन्दू ही नहीं, मानव समाज को एक सूत्र में बान्धने वाला है, जब कि सम्प्रदाय, मत, पन्थ समाज को विभाजित करते हैं। अत: इनके द्वारा प्रचारित और प्रसारित पाखण्ड और अन्धविश्वासों को मिटाना आर्यसमाज का प्रमुख दायित्व है, क्योंकि आर्यसमाज का उद्देश्य ही 'संसार का उपकार करना' तथा 'सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझना' है, जो समाज से ढोंग, पाखण्ड तथा अन्धविश्वास को मिटाए बिना सम्भव नहीं होगा। आर्यसमाज-आन्दोलन के प्रारम्भिक काल में इस पर विशेष बल दिया गया जो धीरे-धीरे उपेक्षित होता गया। आर्यसमाज द्वारा अछूतोद्धार, विधवा-विवाह, बालविवाह-निषेध जैसे सामाजिक आन्दोलनों को तो पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई, क्योंकि उन के पीछे राजकीय आदेशों का सहयोग था; किन्तु साम्प्रदायिक पाखण्ड और अन्धविश्वास पर अंकुश लगाने में ऐसा न होने से उसका क्षेत्र और बढ़ता ही जा रहा है। 'दैनिक जागरण' समाचार पत्र के १० अक्टूबर २०१३ के अंक में यह पढ़कर मैं स्तब्ध रह गया कि एक व्यक्ति ने अपने नौ मास के बच्चे की बलि दे दी। यद्यपि तान्त्रिक क्रियाओं के अन्तर्गत पशु-पक्षियों ही नहीं, मनुष्यों की बलि देना अथवा शरीर के किसी अंग को काट कर मूर्त्तियों पर चढ़ाना असामान्य घटना नहीं है, जिसमें शिक्षित तथा उच्च पदस्थ व्यक्ति भी सम्मिलित पाए जाते हैं। इसी प्रकार बाबा-वेशधारी ठगों और दुराचारियों पर अन्धश्रद्धा रखकर न केवल आर्थिक ठगी, अपितु शारीरिक शोषण (यौन शोषण) के शिकार होने वाले पुरुषों और महिलाओं की संख्या भी कम नहीं है। यद्यपि देश के कानून के अनुसार. आरोप सिद्ध होने पर ऐसे पाखण्डियों को दण्ड दिया जाता है किन्तु उससे पीड़ित की पीड़ा तो समाप्त नहीं हो जाती। अत: आवश्यकता इस बात की है कि लोगों में ऐसी धार्मिक जागरूकता पैदा की जाए जिससे वे पाखण्डियों के चंगुल में फँसे ही नहीं। यद्यपि यह कार्य अत्यन्त कठिन और श्रमसाध्य है, जिसके लिए लाभान्वित हो रहे पाखण्डियों का ही नहीं, अनेकों साम्प्रदायिक गुटों का विरोध भी सहन करना पड़ेगा। तथापि ऐसे सर्वहितकारी आन्दोलन की अगुवाई देशोद्धारक, निर्भीक संन्यासी महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनुयायी आर्यजन न करेंगे तो कौन करेगा?

वस्तुत: आर्यसमाज एक धार्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय आन्दोलन है, जिसका मुख्य कार्य ही कुरीतियों को हटाकर धर्म का शुद्ध स्वरूप समाज के सम्मुख रखना है। इसके लिए आवश्यक है कि आर्यसमाज के कार्यकर्ता विशेषकर विद्वान् प्रचारक, संन्यासी और पदाधिकारी अपने दोष-रहित जीवन और नि:स्वार्थ क्रिया-कलापों से समाज में अपनी अलग प्रतिष्ठित छवि बनाएँ। साथ ही आर्यसमाजों व उनसे सम्बन्धित आर्य संस्थाओं को समाज-सुधार का

शेष भाग पृष्ठ संख्या १८ पर.....

www.thearyasamaj.org

चाहो सफल गृहस्थ तो, गुण मिला कर विवाह कभी न करना

- आचार्य दार्शनेय लोकेश

शीर्षक को देखने से पाठकों को लग सकता है कि हम "गुण विरोधी" अर्थात् अच्छाइयों के विरोध में अपनी बात कह रहे हैं। वस्तुत: ऐसा नहीं है। वास्तव में यहाँ गुण से हमारा तात्पर्य कपोल-कल्पित नक्षत्रों और संस्कृत अथवा हिन्दी वर्णमाला के अतिरिक्त ली गई वर्णमाला से निर्धारित तथा कथित ३६ गुणों से है जो विवाह मेलापक के लिए लिये गये हैं। हम अनुरोध ही नहीं आग्रह पूर्वक स्पष्ट करना चाहेंगे कि ज्योतिष ही नहीं समाज के कल्याण के लिये गम्भीर उत्तरदायित्व को समझते और निभाते हुए यह लेख प्रस्तुत कर रहे हैं। जिसको भावनात्मक तरीके से नहीं अपितु ज्योतिष के यथार्थ संज्ञान युक्त विवेक से लिया जाये।

"ज्योतिष में दृष्टि, सर्वाधिक व्यक्ति पर केन्द्रित होती है। धर्ममय जीवन यापन करते हुये अर्थ उपार्जन कर काम और मोक्ष सिद्धि हेतु दाम्पत्य जीवन में प्रवेश करने से पूर्व वर-वधू के गुणों का आकलन तथा ग्रह मेलापक विधान ज्योतिष शास्त्र (शास्त्र विज्ञान) में निरूपित किया गया है। ....यदि जन्मपत्री वैज्ञानिक आधार पर न बनी हो, नकली हो, मात्र नाम से मेलापक किया गया हो, विद्वान् और चरित्रवान् ज्योतिषी द्वारा निष्कर्ष न लिया गया हो तो मेलापक अशुद्ध माना जायेगा। दैवज्ञ श्री राम ने शाके १५२२ में 'मुहूर्त चिन्तामणि' नामक ग्रन्थ की रचना की, वे ज्ञान की नगरी काशी के विद्वान् थे। उन्होंने मुहूर्त चिन्तामणि के गोचर प्रकरण, संस्कार प्रकरण, विवाह प्रकरण, वधू-प्रवेश प्रकरण, द्विरागमन प्रकरण में मुहूर्तों को पृष्ठभूमि में रखकर वर-वधू चयन पर सूक्ष्म गवेषणा की है।"

हमने हिन्दी मासिक 'हलन्त' के माह दिसम्बर के अंक में प्रकाशित "ज्योतिष और जीवन" लेख में उपरोक्त विचार बिन्दुओं का संज्ञान लिया है। आइये, देखिये कि कैसे इन बिन्दुओं पर कुछ स्वाभाविक प्रश्न उपजते हैं-

- यदि जन्मपत्री वैज्ञानिक आधार पर न बनी हो..... तो क्या जन्मपत्री अवैज्ञानिक भी हो सकती है?

- विद्वान् और चरित्रवान् ज्योतिषी ...... श्रद्धा से भरा जातक यह कैसे जान सकता है कि जो व्यक्ति उन्हें जन्मपत्री और तद्विषयक मार्गदर्शन दे रहा है वह विद्वान् और चरित्रवान् भी है? स्वाभाविक है कि जब तक देश की शासन व्यवस्था जन्मपत्री और उसके व्यावसायिक प्रयोग हेतु मानदण्ड स्थापित नहीं करती तब तक न तो जन्मपत्री की वैज्ञानिकता की परख हो सकती है और ना ही ज्योतिषी की योग्यता की।

- दैवज्ञ श्री राम ने शाके १५२२ में मुहूर्त चिन्तामणि नामक ग्रन्थ की रचना की..... प्रश्न यह है कि यदि शाके १५२२ में उपरोक्त ग्रन्थ रचना के बाद ही वर-वधू चयन पर सूक्ष्म गवेषणा हुई है तो क्या शाके १५२२ से पूर्व के विवाह बिना सूक्ष्म गुण मेलापक के ही होते थे अत: क्या वे आज की अपेक्षा अधिक असफल भी होते थे?

जहाँ तक वैज्ञानिकता की बात है तो हम पाठकों को कुछ आधार बिन्दु स्पष्ट करना चाहते हैं-

अथर्ववेद के १९/७/२-५ में २५ नक्षत्र स्पष्ट हैं जबकि फलित ज्योतिष में, गणितीय सुविधा के कारण से, २७ ही स्वीकार किये हैं। वैदिक, सनातन या हिन्दू जनों आदि कुछ भी कहें, के लिये वेद स्वत: प्रमाण, सर्वोपरि स्वीकार्य एवं नियामक हैं। प्रश्न उठता है कि हम वेद के विरुद्ध क्यों चले? और चले तो इस एक कारण बिन्दु से क्या हम वेद विरुद्ध नहीं हो जाते हैं? मनुस्मृति तो स्पष्ट करती है कि **नास्तिको वेद निन्दक:।**

सूर्य सिद्धान्त एवं आधुनिकी की वेधशालाओं द्वारा स्पष्ट दृश्यमान स्पष्ट प्रमाण करता है कि नक्षत्र समान विस्तार वाले नहीं हैं। प्रश्न है कि प्रत्येक नक्षत्र ८०० कला का क्यों लिया गया है? जिस प्रकार कल्पित अग्नि से हाथ नहीं जलता उसी प्रकार क्या ये कल्पना से गढ़े गये नक्षत्र और पुन: उनके काल्पनिक चरण तथा तदनुरूप उनके काल्पनिक गुण क्या किसी भी तरह से वैज्ञानिक हो सकते हैं? क्या ऐसे अयथार्थ नक्षत्र युक्त फलित ज्योतिषीय आकलन किसी भी वास्तविक जातक के जीवन को प्रभावित कर सकता है?

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने अपनी पुस्तक "दर्शन-दिग्दर्शन" के पृष्ठ ५६० में स्पष्ट किया है कि "....... भारत ने यूनानी ज्योतिष से १२ राशियाँ, होरा (=घण्टा), फलित ज्योतिष का होडाचक्र सीखा, होड़ाचक्र की वर्णमाला भारतीय (क-ख-ग.....) अपितु यूनानी (अल्फा-बीटा-गामा.....) है।

ज्योतिष के प्रकाण्ड विद्वान् शास्त्री भोलादत्त महीतौल्य कहते हैं कि "होड़ाचक्र में अक्षरों का वितरण एकदम

www.thearyasamaj.org

व्याकरण विरुद्ध है। संस्कृत व्याकरण को पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि ने इतने निर्दोष रूप से संवारा है कि अध्येता चमत्कृत हो उठते हैं। लघु सिद्धान्त कौमुदी में वर्णों के उच्चारण स्थान, अन्तर्बाह्य प्रयत्न और अकारादि स्वरों के सभी भेदों का वर्णन किया गया है। उक्तानुसार सभी वर्णों के उच्चारण में दो प्रकार से प्रयत्न होते हैं, पहला इनके स्पष्ट रूपेण उच्चारित होने से पूर्व और दूसरा उच्चारण क्रिया के उपरान्त जिनको क्रमशः आभ्यान्तर और बाह्य प्रयत्न कहते हैं। पाणिनि के '**तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्**' सूत्रानुसार जिन दो या अधिक वर्णों के उच्चारण स्थान और आभ्यान्तर प्रयत्न एक जैसे होते हैं वे सभी वर्ण, सवर्ण कहलाते हैं और भिन्न प्रयत्न वाले परस्पर असवर्ण कहलाते हैं। इस नियम के अनुसार केवल भरणी, आश्लेषा, मघा, विशाखा, अनुराधा, श्रवण और धनिष्ठा को छोड़कर शेष सभी नक्षत्रों के अक्षर विजातीय बन जाते हैं। यह हमारे जातक ग्रन्थों की व्याकरण विरुद्ध एक विडम्बना है जिसे हम ढ़ोते चले आ रहे हैं और न जाने कब तक ढ़ोते रहेंगे? क्या लाभ है ऐसे 'अवकहड़ा चक्र' का जिसमें ञ, ङ, ण व झ को तो स्थान प्राप्त हो किन्तु जू, जे, जो को कोई स्थान न मिला हो, ओ-औ और वो-बौ को सजातीय मान लिया गया हो? शंकर व संकर शब्दों में कोई भेद न हो और विश्वेश्वर और बिश्वेश्वर को एक समान मान लिया गया हो?....... अतएव, अब समय आ गया है कि देश के पंचांगों में दिये जाने वाले नक्षत्र भोगांशा, शतपदचक्र आदि को सुधार लेना चाहिये।''

प्रश्न यह है कि ज्ञान की नगरी काशी के विद्वान् दैवज्ञ श्री राम को यह तथ्य क्यों नहीं दिखाई दिया कि जिस वर्णमाला को वे २७ नक्षत्रों के १०८ चरणों के लिये विभाजित कर रहे हैं वह भारतीय नहीं है, हिन्दी या संस्कृत व्याकरण के आधार पर भी नहीं हैं। ऐसी व्यवस्था को देकर उन्होंने भारतीय जनमानस को पुष्ट किया है या कि......???

सुप्रसिद्ध, वयोवृद्ध ज्योतिषाचार्य, डॉ. रहिमाल प्रसाद तिवारी की सुनिये, ''निरयन पंचांग और उनमें विहित '**अवकहडा चक्र**' को मैं अवैज्ञानिक ही नहीं अपितु अत्यन्त निकृष्ट-असभ्य प्राविधान मानता हूँ। देखिये, बालक का जन्म होते ही जातक के पिता पण्डित जी से पूछते हैं कि क्या बालक का जन्म मूल नक्षत्र में हुआ है? मैं शान्ति करवा दूँगा। इस बालक का चुटका (जन्मपत्री, टेवा) बना दीजिये। पण्डित जी चुटका बनाकर देते हैं और उसमें लिखते हैं-

जातक का जन्म नक्षत्र 'मूल तृतीय चरण', राशि नाम का पहिला अक्षर 'भा', योनि-श्वान, गण-राक्षस, नाड़ी-आदि, जन्म लग्न-कर्क, राधि धनु ....

ह०..................... ज्योतिषाचार्य, ज्योतिष भास्कर इत्यादि

'अवकहडा चक्र' के अनुसार नवजात शिशु को श्वान योनि का कहना क्या उस बालक को 'कुत्ते की औलाद' कहकर गाली देने के समान असभ्य और निकृष्ट आचरण नहीं है? यह अपशब्द उस बालक के माता-पिता तथा पूर्वजों के लिये भी गाली है। वह भी उस 'यजमान' के साथ जिसने कि मिठाई का डिब्बा और पचास रुपये देकर चरणस्पर्श किये हैं।''

प्रश्न यह है कि मूल नक्षत्र के तृतीय चरण से जुड़ा हुआ भा-श्वान-राक्षस-आदि किसी गणितीय अथवा वैज्ञानिक आकलन के परिणाम हैं अथवा पूर्वोक्त २७ नक्षत्र एवं उनके १०८ चरणों के समान ही कल्पना लोक के स्वप्न हैं? ऐसा ही निर्धारण मंगली होने या मंगली न होने का भी है।

पृथ्वी हर समय क्रान्तिवृत्त में उपलब्ध होती हैं और मनुष्य पृथ्वी में। पृथ्वी के पूर्व भाग में जहाँ सूर्योदय होता है वहाँ उदय हो रहा लग्न भाग (क्रान्तिवृत्त का खण्ड) लग्नोदय कहलाता है। चूंकि देखने वाला व्यक्ति चित्रा या किसी भी नक्षत्र में नहीं होता है, अस्तु, लग्नोदय काल जो दिख रहा है वह पृथ्वी की वर्तमान स्थिति का दृश्यमान बिन्दु होता है। स्पष्ट है कि यह बिन्दु कभी भी निरयन नहीं हो सकता। मात्र इस एक छोटे से आधार पर भी निरयन लग्न युक्त जन्मपत्रिका स्वयं में एक शुद्ध पत्रिका, वैज्ञानिक पत्रिका हो ही नहीं सकती। प्रश्न यह है कि विद्वान् या अविद्वान् जहाँ सब सभी लोग जन्मपत्र को अशुद्ध ही ले रहे हों वहाँ ऐसी स्थिति में गुण मिलान ही नहीं पत्रिका मिलान भी कैसे शुद्ध अथवा अर्थपूर्ण हो सकता है? जी नहीं, कभी भी नहीं-कभी भी नहीं।

यह स्पष्ट किये जाने के बाद भी कि नक्षत्रों के गुण एक व्यक्ति ने अपने कल्पना लोक से निर्धारित किये हैं वे तर्कसंगत अथवा सैद्धान्तिक नहीं कहे जा सकते हैं, वह व्यक्ति तो जनकल्याण की छद्म भावना को आरोपित करके समाज में एक मिथ्या को स्थापित किये हुये है। बात यहीं पूर्ण नहीं होती, मान लीजिये कि एक व्यक्ति का जन्म ०५ अक्टूबर २०१३ को १८.०० बजे दिल्ली में हुआ है। प्रचलित पंचांगों के अनुसार इस बालक का जन्म नक्षत्र चित्रा, प्रथम चरण अतः तदनुसार व्याघ्र योनि, वैश्य वर्ण, राक्षस गण, मध्य नाड़ी हुआ। किन्तु वास्तव में (देखें श्री मोहन कृति आर्ष तिथि पत्रक सं. २०७० पृ. ६०) इस बालक का जन्म नक्षत्र हस्त, प्रथम चरण हुआ अतः तदनुसार महिष योनि, वैश्य वर्ण, देव गण तथा आदि नाड़ी हुई। प्रश्न यह है कि यदि इस व्यक्ति के गुण मेलापक चित्रा प्रथम चरण के

www.thearyasamaj.org

जन्म नक्षत्रानुसार मिलाये जायेंगे तो मिलान का औचित्य क्या है? इस अनौचित्य का, जहाँ गुणों की निरर्थकता और गुणों की सिद्धान्तहीनता स्पष्ट हो वहाँ गुणों के आधार पर गृहस्थ को प्रभावित करने वाली नियामकता नहीं मानी और जानी जा सकती है। अस्तु स्पष्ट है कि यदि कोई व्यक्ति गुण मिलान के आधार पर विवाह करता और करवाता है तो वह नितान्त कल्पना लोक की वृथा सैर कर रहा है। इस सब का सत्य, सिद्धान्त, तर्कसंगतता अथवा वैज्ञानिकता से दूर-दूर तक कोई सम्बन्ध नहीं है।

राशि से नक्षत्रों का एक स्थिर सम्बन्ध नहीं है और ना ही हो सकता है। लेकिन यहाँ यह स्थिर सम्बन्ध बना हुआ मानकर और पुन: नक्षत्रों से वर्ण (१ गुण), वश्य (२ गुण), तारा (३ गुण), योनि (४ गुण), ग्रह मैत्री (५ गुण), गण मैत्री (६ गुण), भकूट (७ गुण) और नाड़ी (८ गुण) के कुल ३६ गुणों (८×९/२ गुण) का निर्धारण किया गया हैं जिसकी कोई आधार गणना नहीं है। नक्षत्र विशेष के भाग विशेष (अर्थात् नक्षत्र के चरण विशेष) में जन्म होने से वह निर्धारित वर्ण वैश्यादि के कुल गुण उन जातकों (लड़का या लड़की) के परस्पर मेलापक बिन्दु स्वीकार किये जाते हैं। ग्रह मिलान, मंगली दोष और कथित ज्योतिषी की अपनी अभिरुचि की बातें, इसमें बाकी रह जाती हैं। उन पर लिखना, इस लेख का विषय नहीं है। इस प्रकार कम से कम १८ गुण मिलने पर मेलापक बिन्दुओं की अनुकूलता मान ली जाती है। सच्चाई यह है कि ३६ गुण मिलान वालों के गृहस्थ बर्बाद एवं ८ गुण मिलान वालों के भी बखूबी आबाद गृहस्थ देखे जा सकते हैं। परन्तु इन ज्योतिषचारियों के तर्कजाल ऐसे हैं कि घटित घटना को सिद्ध करने के लिये, वक्त जरूरत के अनुसार कई 'रेडिमेड' जवाब रखे-रखाये होते हैं। जहाँ जैसी आवश्यकता हुई तदानुकूल 'जवाब हाजिर'। अधिक क्या, समझदारों को संकेत ही पर्याप्त है।

अस्तु, ये गुण, गुण नहीं, आपको भटकाने वाले दुर्गुण हैं जो कभी भी निर्णायक नहीं हो सकते। यदि आप चाहते हैं कि आपके पुत्र अथवा पुत्री का गृहस्थ सफल व अपने आप में परिपूर्ण हो तो उसका विवाह गुण मिला कर कभी न करना। हाँ, देखने को शिक्षा-दीक्षा व संस्कार जनित गुणवत्ता, आयु, आरोग्य और आवश्यक लगे तो चिकित्सकीय सम्मति पर्याप्त है। संस्कृति परक है कि नीचादपि उत्तमा विद्या, कन्या दुष्कुलादपि।

सम्पादक एवं गणितकर्ता, श्री मोहन कृति आर्ष तिथिपत्रक, सी-२७६, गामा-।, ग्रेटर नोएडा-२०१३१०

पुस्तक - समीक्षा

पुस्तक का नाम- देव काव्य धारा
लेखक- देवराज आर्यमित्र,
प्रकाशक- राकेश आर्य, डब्ल्यू जेड-४२८, हरिनगर, नानकपुरा, नई दिल्ली-६४
मूल्य- सत्याचरण, **पृष्ठ संख्या-** ३२

आज मशीनीकरण का युग है। सभी नये-नये उपकरणों के सेवक बन रहे हैं। नाना प्रकार की दृश्य-श्रव्य सामग्री जन मानस के सामने आ रही है। सभी वर्ग के लोग उनका रसास्वादन ले रहे हैं इससे युवा पीढ़ि एवं नन्हें-मुन्ने भटक रहे हैं। उन्हें ज्ञान, अध्ययन का मार्ग मिलना चाहिए किन्तु पथ भ्रष्ट होने का साधन अवश्य मिल रहा है। संस्कृति, शिष्टाचार, सेवा, ईश्वर आराधना से दूर होते जा रहे हैं। ऐसे में पद्य बद्ध देव काव्य धारा सभी के हितार्थ है। मार्ग प्रशस्त करेगी। कर्त्तव्य बोध होगा। लेखक ने मूल्य भी सत्याचरण रखा है। आज सत्याचरण की नितान्त आवश्यकता है।

लेखक ने अन्धविश्वास, शराब, जीवन, सत्सङ्ग, नेत्र, हिन्दी भाषा, मनुर्भव, ईश्वर भक्ति पर काव्य रूप में अपनी प्रस्तुति दी है। भाव भाषा सरल है। पाठक अवश्य लाभ उठायें।

पुस्तक का नाम- श्रीमद् भगवद् गीता (एक वैदिक रहस्य) द्वितीय भाग (अध्याय ७ से १२), **लेखक** - स्वामी राम स्वरूप जी योगाचार्य, **मूल्य-** ४००.००, **पृष्ठ संख्या-** ५९४
प्रकाशक- वेद मन्दिर प्रकाशन, टीका लेहसर योल बाजार योल कैम्प, जि. कांगड़ा-१७६०५२ (हि.प्र.)

भौतिकवादी युग में वेदों का अमृत पान जीवन को कायाकल्प करता है। वेदों का पढ़ना पढ़ाना प्रकाश पुञ्ज है। वेदों के कारण ही ज्ञान की अजस्र धारा बह रही है अन्यथा सर्वत्र अन्धकार ही हो जाता। विद्वान्, लेखक द्वारा लेखन कार्य करना वैदिक ज्ञान ही है। वेद तक ही सीमित रहते तो अन्य पुस्तकें उपनिषद् गीता आदि नहीं होती। गीता का मर्म वेद द्वारा ही संभव है। इस संदर्भ में स्वामी राम स्वरूप जी योगाचार्य का योगदान सराहनीय है। ज्ञान व वेद-विरोधी सन्तों ने पाप व पाखण्ड फैलाकर अपनी पताका भोली भाली जनता में फहरा रखी है। उनके मध्य श्री भगवद् गीता (एक वैदिक रहस्य) अनुपम कार्य करेगी। पाठकों को ७ से १२ अध्याय का सम्पूर्ण रस पान करना चाहिए।

देवमुनि, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

www.thearyasamaj.org

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ – प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। *अतिथि सेवा*– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***–इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

www.thearyasamaj.org

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३० अक्टूबर २०१३ तक)

१. देव मुनि, अजमेर, २. बलवीर सिंह बत्रा, नई दिल्ली ३. जी.के. शर्मा, किशनगढ़, ४. डॉ. रमेश आर्य व श्रीमती उषा आर्या, अजमेर, ५. विजय गहलोत व कंचन गहलोत, अजमेर, ६. राजवीर वशिष्ठ, रोहतक, हरियाणा, ७. गुप्ता माता जी, एल.आई.सी. कॉलोनी, अजमेर, ८. दयानन्द सौरभ, गुलाबपुरा, ९. गीता, मंगल नरूला, मोहाली, पंजाब, १०. रामगोपाल, ग्वालियर, म.प्र., ११. सदोरोमल खुबानी, गाजियाबाद, उ.प्र., १२. रामदेव आर्य, अजमेर, १३. रामादेवी, गुड़गाँव, हरियाणा, १४. स्वास्तिकमाह चेरिटेबल ट्रस्ट, अमरावती, महाराष्ट्र, १५. परमानन्द छापरवाल, जयपुर, १६. अंजली बंसल, नई दिल्ली, १७. मधुरभाशिनी, जयपुर, १८. रवि बत्रा, गुड़गाँव, हरियाणा, १९. जगदीश प्रसाद, नासिक, २०. डॉ. अचला आर्या, अजमेर, २१. मोहब्बत सिंह, जालौर, २२. सुदर्शन सिंह कोठारी, उदयपुर, २३. राजाराम नागर, उधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड, २४. उर्मिला अवस्थी, जोधपुर, २५. विष्णु चैतन्य, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड, २६. देशबन्धु गुप्ता, पंचकूला, हरियाणा

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगत अतिथियों को निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौओं को उत्तम चारा मिले इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चेक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३० अक्टूबर २०१३ तक)

१. बृजमोहन बागड़ा, नागौर २. उर्मिला उपाध्याय, अजमेर, ३. बलवीर सिंह बत्रा, नई दिल्ली, ४. डॉ. रमेश आर्य, उषा आर्या, अजमेर, ५. विजय गहलोत, कंचल गहलोत, अजमेर, ६. गुप्ता माता जी, अजमेर, ७. मोहन जी, मण्डी, हि.प्र., ८. डॉ. चन्द्रदेव शर्मा, अजमेर, ९. संजय शर्मा, बडोदरा, गुजरात, १०. रामानन्द राधेश्याम सुनार, जावला ११. जैनिथ इन्टरप्राइजेज, नई दिल्ली, १२. विजयलक्ष्मी चौधरी, जोधपुर, १३. मैसर्स राजपुताना म्यूजिक हाउस, अजमेर, १४. मधुरम, अजमेर, १५. शकुन्तला मदान, दिल्ली, १६. डॉ. अचला आर्या, अजमेर, १७. डॉ. बी.एम. मन्त्री, हैदराबाद, १८. कै. चन्द्रप्रकाश, कमलेश त्यागी, हरिद्वार, उत्तराखण्ड, १९. मीरा, नई दिल्ली, २०. दयानन्द ग्राम, सोनीपत, हरियाणा, २१. सुबेदार कबीर सिंह, सोनीपत, हरियाणा, २२. मयंक कुमार, अजमेर, २३. रामेश्वरी देवी, अजमेर, २४. ओमवती आर्या, करनाल, हरियाणा २५. जबेरसिंह, सहारनपुर, उ.प्र. २६. मोलहाद सिंह, सहारनपुर, उ.प्र., २७. मास्टर जय कुमार, सहारनपुर, उ.प्र., २८. उर्मिला अवस्थी, जोधपुर, २९. सुनील कुमार अरोड़ा, जयपुर, ३०. कमल किशोर आर्य, जोधपुर, ३१. दिलीपसिंह चौरड़िया, स्वतन्त्र कुमार चौरड़िया, जयपुर, ३२. महावीर सिंह, ग्वालियर, म.प्र., ३३. हरनारायण चण्डक, मुम्बई।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

सत्यार्थ प्रकाश प्रचार निधि

(१ से ३० अक्टूबर २०१३ तक)

१. सुशील रतन मिगलानी, अबोहर, पंजाब, २. महर्षि दयानन्द सरस्वती भवन न्यास, जोधपुर, ३. कृष्ण कुमार जांगिड़, अलवर, ४. प्रमोद केजरीवाल, नई दिल्ली, ५. राजाराम नागर, ऊधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड, ६. प्रवीण आर्य, सहारनपुर, ७. आर्यसमाज सरदार शहर, राजस्थान, ८. जयपालसिंह आर्य, सहारनपुर, ९. ताराचन्द लेखपाल, सहारनपुर, १०. जब्बेरसिंह आर्य, सहारनपुर, ११. मास्टर जयकुमार, सहारनपुर, १२. मोलहाद सिंह, सहारनपुर, उ.प्र., १३. राजेन्द्र कुमार शर्मा, अम्बाला, हरियाणा, १४. रामनिवास शर्मा, जोधपुर, १५. हरनारायण चण्डक, मुम्बई।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

www.thearyasamaj.org

जिज्ञासा समाधान – ५१

-आचार्य सोमदेव

जिज्ञासा- जीव हमेशा दो दशाओं में ही रहता है- या तो प्रकृति के बन्धन में अथवा परमात्मा के सान्निध्य (मोक्ष) में। योगदर्शन में उल्लेख है कि **''दृष्ट दृश्ययो: संयोगोहेयहेतु:''** अर्थात्- चेतन आत्मा से अचेतन प्रकृति का संयोग ही दु:खों का कारण है। प्रकृति के सम्पर्क में आने पर ही जीवन को अनेक दु:खों का सामना करना पड़ता है और जब विवेक द्वारा जीव की-प्रकृति से पूर्णरूपेण अनासक्ति हो जाती है तथा विषय-भोगों की कोई कामना या वासना शेष नहीं रहती तब प्रकृति के बन्धन से मुक्त होकर जीव की स्थिति आनन्द स्वरूप ब्रह्म में हो जाती है इसी को मोक्ष कहा जाता है।

परन्तु छान्दोग्योपनिषद् (७/२५/२) में कहा गया है कि- **''तस्य सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति''** अर्थात् मुक्तात्मा सभी लोकों में अपनी सभी कामनाओं को पूर्ण करता हुआ विचरता है।

ऋग्वेद (९/११३/९) में भी कहा गया है- **''यत्रानुकामं चरणं.....तत्र माममृतं कृधि''** अर्थात्- हे प्रभो जहाँ मुक्तात्मा कामानुकूल विचरण करते हैं- वहाँ मुझे भी मुक्त कर दे।

यह भी कहा जाता है कि मुक्ति में शरीर रहित आत्मा अपने विशुद्ध रूप में होता है- तब उसे केवल परमात्मा के आनन्द की ही अनुभूति होती है।

न्याय दर्शन के अनुसार- मिथ्याज्ञान से उत्पन्न जब जीव की पाँचों विषयों में आसक्ति तथा वासना दूर हो जाती है तब वासना के नाश से फिर जन्म नहीं होता इसी का नाम मोक्ष है।

अब विचारणीय यह है कि शब्द-स्पर्श-रूप-रस और गन्ध- ये विषय प्रकृति के हैं। इन्हीं की कामना और वासना अनेक दु:खों का हेतु है। यही तो बन्धन है। इसी से छूटने का नाम मुक्ति है। यदि मुक्ति में भी मुक्तात्मा उक्त विषयों का भोग करता है तो वह प्रकृति के संयोग से ही होगा- वह आनन्द का हेतु कैसे हो सकता है? जबकि महर्षि दयानन्द ने शतपथ ब्राह्मण का उदाहरण देते हुए लिखा है कि- मोक्ष में जीव के लिये यह व्यवस्था भी होती है:-

१. ''शृण्वन्श्रोत्रं भवति। २. स्पर्शयन् त्वग्भवति। ३. पश्यन् चक्षुर्भवति। ४. रसयन् रसना भवति। ५. घ्राणयन् घ्राणं भवति।'' अर्थात् विषयों का भोग आत्मा मोक्ष दशा में भी करता है।

छान्दोग्योपनिषद् (८-१२-१०) में तो यह भी कहा गया है कि- जिस प्रदेश व कामना की मुक्त जीव अभिलाषा करता है- वह उसके संकल्प मात्र से उद्भूत हो जाता है। उससे युक्त होकर वह जीव आनन्दित रहता है।

प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या मुक्ति में आत्मा को परमात्मा का आनन्द कम पड़ जाता है-जो वह प्रकृति के विषयों का भोग करता है? जो प्रकृति नश्वर-विकारी तथा दु:खों का हेतु है- उसके भोगने की लालसा यदि मोक्ष में भी बनी रहती है तो फिर सांसारिक और मुक्ति की दशा में क्या अन्तर रहा? यदि जीव संकाल्पनिक रूप में भी उनका भोग करता है तो-

इसको संकीर्णता और अज्ञान ही कहा जायेगा। यह तो ऐसा ही होगा जैसे- 'हीरा छोड़ दिया और कंकड़ बटोर लिये।' और यदि यह कहा जाये कि जीव मोक्ष में प्रकृति के माध्यम से परमात्मा का ही आनन्द प्राप्त करता है तो भी ठीक नहीं- क्योंकि मोक्ष में तो जीव का सीधा सम्बन्ध परमात्मा से होता है।

प्रकृति में परमात्मा के रचना-कौशल का अवलोकन करके आनन्दित होना तो ठीक है- यह तो सांसारिक तथा शारीरिक दशा में भी हो जाता है- पर शब्द-स्पर्श-रूप-रस आदि की लालसा यदि मोक्ष में भी रहे तो यह बात समझ में नहीं आती?

कृपया उक्त जिज्ञासा का समाधान कर अनुग्रहीत करें। धन्यवाद

पुरुषोत्तम आर्य, विदिशा, मध्य प्रदेश

समाधान- जीव प्रकृति के बन्धन या मोक्ष इन दो दशाओं के अतिरिक्त तीसरी दशा प्रलय में मुर्च्छित दशा में भी रहता है। आपकी जिज्ञासा मुक्ति में आत्मा सांसारिक भोग करता है या नहीं, इस पर है। आपने अनेक प्रमाण भी दिये हैं जिनसे लगता है कि आत्मा मोक्ष में सांसारिक भोग करता है। छान्दोग्योपनिषद् का वाक्य ''तस्य सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति।'' मुक्तात्मा सभी लोकों में अपनी सभी कामनाओं को पूर्ण करता हुआ विचरण करता है। इसका यह सीधा अर्थ नहीं है, इसका सीधा अर्थ होगा ''उसका स्वेच्छा गमन सभी लोकों में हो जाता है अर्थात् उसको कहीं रुकावट नहीं होती। और जो ऋग्वेद ९.११३.९वाँ मन्त्र ''यन्त्रनुकामं चरणं......तत्र माममृतं कृधि।'' अर्थात् हे प्रभो जहाँ मुक्तात्मा कामानुकूल विचरण करते हैं, वहाँ मुझे

www.thearyasamaj.org

भी मुक्त कर दे।'' इस अर्थ की अपेक्षा महर्षि दयानन्द जी का अर्थ देखते हैं ''हे परमात्मन्! जिस आप में इच्छा के अनुकूल स्वतन्त्र विहरना है, जिस त्रिविध अर्थात् आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक दु:ख से रहित (त्रि) तीन (दिने) सूर्य, विद्युत् और भौम्य अग्नि से प्रकाशित सुखस्वरूप में कामना करने योग्य शुद्ध कामना वाले, यथार्थ ज्ञानयुक्त, शुद्ध विज्ञानयुक्त मुक्ति को प्राप्त हुए सिद्ध पुरुष विचरते हैं, उस अपने स्वरूप में मुझको मोक्ष प्राप्त कीजिये और उस परमानन्दैश्वर्य के लिए कृपा से प्राप्त हूजिये।'' यहाँ महर्षि ने अर्थ करते हुए ''शुद्ध कामना वाले, यथार्थ ज्ञानयुक्त, शुद्ध विज्ञान युक्त'' ये विशेषण मुक्त पुरुष के लिए दिये हैं। इससे पता चलता है कि कामना तो मुक्ति में भी रहती है और वह कामना शुद्ध ज्ञानयुक्त होती है। आपकी समस्या 'कामना' व 'भोग' को लेकर है। पहले इन्हीं पर विचार कर लेते हैं। ध्यान रखने योग्य बात यह है कि आत्मा कभी भी कामना रहित, भोग रहित नहीं हो सकता, चाहे सांसारिक दशा में हो या मोक्ष दशा में हो। जब जीवात्मा अविद्या से युक्त होता है तब उसकी कामना केवल संसार के सुख भोगने की होगी और जब अविद्या से रहित ज्ञानयुक्त होता है तब उसकी कामना केवल संसार के सुख-दु:ख से छूटने और मोक्ष प्राप्त करने की होगी। ऐसा इसलिए क्योंकि कामना (इच्छा) जीवात्मा का स्वाभाविक गुण है, वह किसी भी दशा में छूट नहीं सकता। इसी प्रकार सकाम-निष्काम की भी बात है। जब कोई संसार के विषयों, प्रसिद्धि आदि के लिए कर्म करता है तब वे कर्म सकाम होते हैं और जब केवल परमेश्वर के आनन्द मोक्ष के लिए कर्म करता तब वे कर्म निष्काम कर्म होते हैं। कामना तो दोनों में हैं। क्योंकि सर्वथा कामना रहित होना असम्भव है। निष्काम का अर्थ सर्वथा सांसारिक कामनाओं से रहित हो, केवल ईश्वर की कामना का होना ठीक और संगत है।

इसी प्रकार भोग को भी हम निन्दित समझते हैं किन्तु यह एकाङ्गी है। जब भोग अविद्या से युक्त होकर होगा तब वह बन्धन का कारण बनेगा और जब वह विद्यायुक्त होगा तब मोक्ष का साधन बनेगा। जब भोग उचित मात्रा में, धर्मपूर्वक, विद्यापूर्वक है तो वह निन्दनीय नहीं है और यदि इसके विपरित है तो निन्दनीय कह सकते हैं। इसलिए जहाँ कहीं शास्त्रों में, मोक्ष में कामना या भोग की बात आती है तो विचलित नहीं होना चाहिए।

आपने जो कहा ''मुक्ति में शरीर रहित.... तब उस केवल परमात्मा के आनन्द की ही अनुभूति होती है।'' इसमें ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि केवल ईश्वर के आनन्द की ही अनुभूति होती है, क्योंकि मोक्ष में आत्मा, प्रलय अवस्था की अनुभूति करता है, यदि प्रलय काल चल रहा है तो। सृष्टिकाल है तो सृष्टि की, मोक्ष में अन्य मुक्तात्माओं की, ब्रह्माण्ड में कोई घटना होती है और मुक्तात्मा अनुभूति करना चाहता है तो उनकी अनुभूति होती है।

शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध ये विषय हैं, इनकी अविद्यायुक्त कामना और अविद्यायुक्त वासना दु:खों का हेतु हैं, यही बन्धन है। मुक्ति में मुक्तात्मा इन विषयों का भोग करता है (सांसारिक लोगों की तरह) ऐसा किसी भी वेदादि शास्त्र में नहीं लिखा। महर्षि दयानन्द जी ने तो शतपथ का उदाहरण देते हुए लिखा 'शृण्वन् श्रोत्रं भवति.....अहं कुर्वाणोऽहकारो भवति'। यहाँ इन विषयों का अर्थ ज्ञान करना है। महर्षि का तात्पर्य भी यही है कि जब आत्मा परमेश्वर की विविध रचना को देखता है और उसके रूप, रस आदि का ज्ञान करना चाहता है तो अपनी स्वाभाविक शक्ति से कर लेता है न कि उन पदार्थों को लक्ष्य बनाकर उनका विषय भोग करता है। इन विषयों को जानने से मुक्तात्मा में कोई विकार आ जाता हो या उसके आनन्द में कमी आ जाती हो ऐसा कदापि नहीं है। क्योंकि परमात्मा भी सभी वस्तुओं को जानता है, अविद्या को जानता है, सृष्टिकाल में सदा इसके सम्पर्क में रहता है यह सब होते हुए भी परमात्मा विकार युक्त नहीं होता। जीवनमुक्त पुरुष भी संसार में रहते हुए, संसार के विषयों के सम्पर्क में आता है क्या इससे जीवनमुक्त पुरुष में विकृति आ जाती है? ऐसा सर्वथा नहीं है। इसी प्रकार मुक्ति में मुक्तात्मा के लिए भी समझना चाहिए।

मोक्ष में आत्मा की विषयों को भोगने की लालसा कभी भी नहीं रहती है, हाँ इनका ज्ञान जब करना चाहता है तब संकल्प मात्र से कर सकता है। इसको 'हीरे छोड़ कंकड़ बटोरना' नहीं अपितु 'कंकड़ छोड़ हीरे बटोरना' कहिए।

प्रकृति में परमात्मा के रचना कौशल का अवलोकन करके आनन्दित होना आप भी स्वीकार करते हैं। उसमें देखना तो हो ही गया यदि इसके साथ ईश्वर के कला कौशल का सुनना-स्पर्श करना आदि भी हो तो उसमें क्या है। यह काम सांसारिक व शारीरिक दशा में नहीं हो सकता क्योंकि इस दशा में हम बहुत कम (तुच्छ) जान पाते हैं और मोक्ष में तो जितनी इच्छा हो उतनी जान सकते हैं। मोक्ष में इन स्पर्श आदि विषयों की अविद्या युक्त लालसा भी नहीं होती क्योंकि वहाँ पर आत्मा अपने शुद्ध स्वरूप में विद्यायुक्त युक्त रहता है।

ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

www.thearyasamaj.org

संस्था-समाचार

–१६ से ३१ अक्टूबर २०१३

(१) योग-साधना-शिविर सम्पन्न- परोपकारिणी सभा के तत्त्वावधान में ऋषि उद्यान के प्रांगण में दिनांक २० से २७ अक्टूबर २०१३ तक योग-साधना-शिविर (प्राथमिक स्तर) का आयोजन किया गया। जिसमें दिल्ली, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, उत्तराखण्ड, बिहार, राजस्थान, मध्य-प्रदेश, छत्तीसगढ़, ओडिशा, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, गुजरात आदि प्रान्तों से पधारें लगभग १२९ साधक-साधिकाओं ने भाग लिया। शिविर में शिविरार्थियों को डॉ. धर्मवीर जी, स्वामी विष्वङ् जी, आचार्य सत्येन्द्र जी, स्वामी वेदपति जी व यतीन्द्र जी से विभिन्न विषयों यथा-शिवसंकल्प सूक्त, योगदर्शन परिचय, ईश्वर-जीव-प्रकृति, जिज्ञासा समाधान, प्रातः-सायं उपासना का क्रियात्मक अभ्यास, सांख्य दर्शन परिचय व आत्म निरीक्षण आदि पर मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। शिविर में प्रत्येक शिविरार्थी के लिए प्रातः ४ बजे से रात्रि ९.३० बजे तक की दिनचर्या निर्धारित थी, जिनका उन्हें पालन करना होता था। शिविर में शिविरार्थियों ने सातों दिन मौन रहकर अपनी आध्यात्मिक उन्नति के लिए प्रयास किया।

(२) डॉ. धर्मवीर जी का प्रचार कार्यक्रम-सम्पन्न कार्यक्रम- (क) १८ से २० अक्टूबर दीनानगर मठ (पंजाब) के वार्षिकोत्सव में भाग लिया। इसके अन्तर्गत संस्कृति सम्मेलन, वेद सम्मेलन आदि सत्रों में अपने विचार प्रस्तुत किए।

(ख) २०-२७ अक्टूबर- योग-साधना-शिविर, ऋषि उद्यान में शिविरार्थियों को विभिन्न विषयों पर मार्गदर्शन प्रदान किया।

आगामी कार्यक्रम- (क) १५ से १७ नवम्बर २०१३-आर्यसमाज धामावालाँ, देहरादून के कार्यक्रम में भाग लेंगे।

(ख) १८-२४ नवम्बर २०१३- आर्यसमाज पटेल नगर, दिल्ली के कार्यक्रम में उद्‌बोधन प्रदान करेंगे।

(ग) २४ नवम्बर से १ दिसम्बर २०१३- ध्यान-प्रशिक्षक-प्रशिक्षण शिविर, ऋषि उद्यान, अजमेर में शिविरार्थियों का मार्गदर्शन करेंगे।

(३) आचार्य सानन्द जी का प्रचार कार्यक्रम-

(क) ७ अक्टूबर २०१३ को जयपुर के एक सनातनी परिवार में रात्रि प्रवचन।

(ख) ८ अक्टूबर २०१३ को गुरुकुल तेग बहादुर नगर, दिल्ली में प्रवचन दिया।

(ग) १० व ११ अक्टूबर- आर्ष वैदिक कन्या गुरुकुल जीवनपुर (मुजफ्फरनगर, उ.प्र.) में कई सत्रों में प्रवचन दिए।

(घ) ११ अक्टूबर को ही आर्ष कन्या विद्यापीठ, गुरुकुल नजीबाबाद का भ्रमण किया।

(ङ) १२ अक्टूबर को चण्डीगढ़ के लिए प्रस्थान। अगले दिन प्रातः, आर्यसमाज सेक्टर-७ में रविवारीय प्रवचन प्रदान किया।

(च) १३ अक्टूबर को फगवाड़ा (कपूरथला, पंजाब) के लिए प्रस्थान। अगले दिन प्रातः सत्संग में लोगों का मार्गदर्शन किया।

(छ) १४ अक्टूबर को आचार्य सत्यवान् जी के निवास (हिसार, हरियाणा) में रात्रि विश्राम व अगले दिन प्रातः प्रवचन।

(ज) १५ अक्टूबर को गुरुकुल खाण्डा-खेड़ी में चौधरी मित्रसेन आर्य की स्मृति में संचालित गुरुकुल में रात्रि विश्राम व प्रातः यज्ञोपरान्त प्रवचन।

(झ) १७ अक्टूबर को कन्या गुरुकुल नरेला, दिल्ली में प्रवचन।

(ञ) १८ व १९ अक्टूबर को आर्यसमाज टटीरी, (बागपत, उ.प्र.) के वार्षिकोत्सव में भाग लिया। यहाँ विभिन्न सत्रों में आपने आगन्तुक महानुभावों का मार्गदर्शन किया।

(४) यज्ञ एवं प्रवचन- जैसा कि विदित है कि ऋषि उद्यान, आर्यजगत् के उन स्थानों में से एक है, जहाँ पूरे वर्ष दोनों समय अपरिहार्य रूप से यज्ञ एवं प्रवचन का कार्यक्रम होता है। प्रातःकाल यज्ञोपरान्त वेद के कुछ मन्त्रों का पाठ तथा पूर्व निर्धारित मन्त्र का महर्षि दयानन्द कृत भाष्य का स्वाध्याय किया जाता है। प्रातः प्रवचन के क्रम में सामान्य दिनों में डॉ. धर्मवीर जी जहाँ विभिन्न विषयों पर अपने विचार रखते हैं, वहीं स्वामी विष्वङ् जी अपने योगदर्शन के क्रम को आगे बढ़ाते हैं तथा सायं सत्संग में जहाँ सोमवार से बुधवार को आचार्य सत्येन्द्र जी व्यवहारभानु आदि ऋषि ग्रन्थों का स्वाध्याय कराते हैं, वहीं गुरुवार से शनिवार आचार्य कर्मवीर जी महर्षि के अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' का स्वाध्याय करवाते हैं। रविवार को गुरुकुल के ब्रह्मचारियों में से कोई एक ब्रह्मचारी किसी विषय पर अपने विचार प्रस्तुत करते हैं।

२०-२७ अक्टूबर को अपने प्रवचन क्रम में डॉ. धर्मवीर जी ने योग-साधना-शिविर के उपलक्ष्य में शिवसंकल्प मन्त्रों की व्याख्या करते हुए बताया कि यजुर्वेद के ३४वें अध्याय के प्रारम्भ के इन छः मन्त्रों को शिवसंकल्प मन्त्रों के नाम से जाना जाता है। सामान्य आर्यजन भी इन मन्त्रों से

www.thearyasamaj.org

परिचित होते हैं क्योंकि रात्रि में इन्हीं मन्त्रों से दिनचर्या समाप्त की जाती है और शयन के लिए जाया जाता है। यहाँ इन छवों मन्त्रों के चौथे अंश में '**तन्मे मन: शिवसंकल्पमस्तु**' आया हुआ है। यहाँ '**तन्मे मन:**' तथा '**शिवसंकल्पमस्तु**' दोनों का ही विशेष अर्थ है। '**तत् मे मन:**'= वह मेरा मन अर्थात् जिस मन की यहाँ चर्चा की जा रही है, वह अमुक विशेषताओं वाला, मन मेरा है, मैं उसका स्वामी हूँ और दूसरी बात कि वह मेरा मन 'शिवसंकल्पमस्तु'= शिव संकल्प वाला बनें। अच्छे संकल्प वाला/अच्छे विचार वाला बनें, हो जावें। यहाँ बने या हो जावें क्रिया से यह अर्थ नहीं निकाला जा सकता कि यहाँ केवल प्रार्थना मात्र है। यहाँ प्रार्थना तो है ही, साथ ही साथ बने क्रिया में सम्भावना भी है कि वह मेरा मन ऐसा (शुभ संकल्पों वाला) बन सकता है।

मनुष्य के जीवन में कुछ वस्तुएँ ऐसी होती हैं, जिनका वह प्रयोग तो बहुत करता है लेकिन उसके स्वरूप से अपरिचित होता है या उसके स्वरूप के सम्बन्ध में बहुत कम जानता है। ऐसी वस्तुओं में मन सर्वप्रमुख है। आपने बताया कि इन साधना शिविरों में यही प्रयास किया जाता है कि साधक मन के स्वरूप से अधिकाधिक परिचित हो सकें और मुक्ति-पथ पर अग्रसर हो सके। मुमुक्षु व्यक्ति को महर्षि के अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के ७वें, ८वें तथा ९वें समुल्लास का विशेष अध्ययन करना चाहिए। महर्षि ने ७वें समुल्लास में ईश्वर के विषय में, ८वें में प्रकृति के विषय में तथा ९वें में मुक्ति के विषय में लिखा है। मुक्ति की चर्चा करते हुए स्वामी जी ने वहाँ लिखा है कि- कुछ साधनों की चर्चा पहले कर आए, कुछ विशेष साधनों की चर्चा यहाँ कर रहे हैं, इस प्रकार स्वामी जी ने वहाँ चार साधन बताए हैं- पहला विवेक, दूसरा वैराग्य, तीसरा षड्-सम्पत्ति तथा चौथा मुमुक्षुत्व। इन चारों साधनों की व्याख्या करते हुए, महर्षि जी का उद्धरण देते हुए सभा के कार्यकारी प्रधान डॉ. धर्मवीर जी ने बताया कि विवेक, विवेचन करने को, पृथक्-पृथक् कर देखने को कहते हैं। हम संसार की वस्तुओं का विवेचन/वर्गीकरण कई तरह से कर सकते हैं। वर्गीकरण के एक प्रकार में समस्त दृश्यमान् जगत् को जड़ और चेतन, इन दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। जो श्वास-प्रश्वास लेना, भोजन ग्रहण करना, अपशिष्ट पदार्थों का त्याग करना, सोचना, विचारना, सुनना, बोलना आदि क्रियाएँ करते हैं, वे चेतन हैं, इसके अतिरिक्त, जो उपरोक्त क्रियाएँ नहीं करते हैं, वे जड़ हैं। अब यहाँ विचारणीय यह है कि जिनको हमने चेतन माना, उनमें जो हमें दिखाई दे रहा है, स्थूल शरीर धारी, वह चेतन है अथवा चेतन सत्ता इससे कुछ भिन्न है। इस प्रकार साधक विवेक के अन्तर्गत चेतन को खोजना प्रारम्भ करता है और इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि देखना, सुनना, चलना आदि क्रियाएँ, जिनके कारण वह स्थूल पदार्थों को चेतन मानता आया है, ये क्रियाएँ किसी और के स्वामित्व में हो रही हैं। 'देखना' आँख का काम जरूर है लेकिन यह इसकी इच्छा नहीं है, इसी प्रकार सुनना कान का काम जरूर है लेकिन ये इसकी इच्छा नहीं है अर्थात् ये (आँख, कान आदि) किसी और की इच्छा से कार्य करने वाले यन्त्र मात्र हैं, ये कर्त्ता नहीं है, जो कर्त्ता है, वही चेतन है। तो पुन: उस चेतन का स्वरूप कैसा है? इत्यादि प्रश्नों को उठाकर साधक क्रमश: उनका समाधान करता है।

अपने प्रवचन क्रम में स्वामी विष्वङ् जी ने 'ईश्वर-जीव-प्रकृति' विषय को विस्तार पूर्वक स्पष्ट किया। उपस्थित महानुभावों की शंकाओं का समाधान करते हुए आपने 'सरस्वती' शब्द का अर्थ, 'आसन' लम्बे समय तक कैसे लगाया जाए, प्राणायाम अधिक देर तक कैसे किया जाए, 'पूर्ण मौन' का पालन कैसे किया जाए, 'ध्यान' की गहराई में कैसे उतरा जाए, अहंकार, तन्मात्राओं, महाभूतों का स्वरूप, जीवात्माओं की संख्या, अवतार सम्भव है या नहीं, नाम के आगे एक से अधिक बार 'श्री' लगाने का प्रयोजन, जप करते समय १०८ बार करने का औचित्य है या नहीं इत्यादि शंकाओं का सप्रमाण उत्तर दिया।

आचार्य सत्येन्द्र जी ने उपस्थित महानुभावों के समक्ष सांख्य दर्शन का अत्यन्त सरल शब्दों में परिचय रखा। सांख्य दर्शन के कुछ सूत्रों की चर्चा करते हुए आपने बताया कि इस शास्त्र की रचना, महर्षि कपिल ने व्यक्ति को तीनों दु:खों (आध्यात्मिक, आधिभौतिक व आधिदैविक) से निवृत्त कराने के लिए की है और इसे ही 'अत्यन्त पुरुषार्थ' का नाम दिया गया है। (**अथ त्रिविधदु:खा-त्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरुषार्थ:**)। मूल में मूल का अभाव होने से मूल, अमूल होता है, अर्थात् जो मूल (कारण) होता है, इसका कोई भी मूल (कारण) नहीं होता अत: कारण के कारण का अभाव होने से, कारण अकारण वाला होता है, (**मूले मूलाभावादमूलं मूलम्**)। वर्तमान में चल रहे सम्प्रदायों के विपरीत आर्यसमाज में ज्ञान का इतना महत्त्व होने का एक कारण महर्षि जी द्वारा ज्ञान के महत्त्व का स्पष्ट प्रतिपादन भी रहा है, इसका आधार कहीं न कहीं सांख्य दर्शन की घोषणा- '**ज्ञानान्मुक्ति:, बन्धो विपर्ययात्**' रही है अर्थात् मुक्ति का मूल साधन ज्ञान ही है और अज्ञान ही बन्धन का कारण है।

आत्मनिरीक्षण के सत्र के अन्तर्गत स्वामी वेदपति जी ने, साधकों द्वारा दिनचर्या में की जाने वाली त्रुटियों की ओर, उनका ध्यान आकृष्ट कराकर उसे दूर करने की क्रियात्मक प्रक्रिया समझाई तथा उन्हें आध्यात्मिक विषयों पर उद्‌बोधन भी प्रदान किया।

आचार्य कर्मवीर जी व दीपक आर्य

www.thearyasamaj.org

आर्यजगत् के समाचार

१. व्याकरण प्रतियोगिता- सभी सज्जनों को सूचित किया जाता है कि प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी श्रीमद्दयानन्द आर्ष गुरुकुल एवं श्री रामकृष्ण गोशाला खेड़ा खुर्द दिल्ली-८२ में अखिल भारतीय अन्तर गुरुकुलीय संस्कृत व्याकरण प्रतियोगिता (अष्टाध्यायी-कण्ठस्थीकरण, प्रथमावृत्ति, धातुवृत्ति एवं काशिका) आगामी २७ व २८ दिसम्बर २०१३ को आयोजित की जा रही है। इच्छुक छात्र सम्पर्क करें। विस्तृत नियमावली शीघ्र भेजी जाएगी।

सम्पर्क-आचार्य सुधांशु, चलभाष-०९३५०५३८९५२

२. पुरस्कार घोषित- गंगाप्रसाद उपाध्याय पुरस्कार समिति, मुट्ठीगंज, इलाहाबाद द्वारा २०१२-१३ का **गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कार** इस वर्ष प्रख्यात वैदिक विद्वान् डॉ. रूप किशोर शास्त्री, सचिव महर्षि सन्दीपनि वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन को उनकी महत्त्वपूर्ण कृति 'दयानन्द निरुक्ति व्युत्पत्ति कोष' तथा डॉ. रमेश दत्त शास्त्री फैजाबाद को उनकी महत्त्वपूर्ण कृति 'महर्षि दयानन्द का दार्शनिक चिन्तन' पर प्रदान किया जायेगा।

पुरस्कार में ११०००/- रु. की राशि के साथ स्मृति चिह्न, प्रशस्ति पत्र तथा अंग वस्त्रम् से विद्वानों को अलंकृत किया जाता है।

३. छात्रवृत्ति एवं अभिनन्दन समारोह- मानव सेवा प्रतिष्ठान के १५ वर्ष पूर्ण होने के शुभावसर पर संस्थान ने छात्रवृत्ति एवं प्रतिभा पुरस्कार तथा अभिनन्दन समारोह का भव्य आयोजन ६ अक्टूबर २०१३ को ११९, गुरुकुल गौतमनगर के विशाल भवन में बड़ी धूमधाम से स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती (प्राचार्य गुरुकुल गौतम नगर) की अध्यक्षता में किया गया। समारोह में १० विद्वानों एवं विदुषियों को प्रशस्ति-पत्र, शाल तथा ११-११ हजार रुपये से सम्मानित किया गया।

४. बोधोत्सव का आयोजन- आर्य जनों को यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता होगी कि प्रतिवर्ष की भाँति आगामी वर्ष में महर्षि दयानन्द जन्म स्थान टंकारा में शिवरात्रि पर्व पर भव्य ऋषि बोधोत्सव का आयोजन बुधवार, वीरवार, शुक्रवार, २६, २७, २८ फरवरी २०१४ को किया जायेगा। आपसे निवेदन है कि आप यह तिथियाँ अभी से अंकित कर लेवें और इन तिथियों में अपनी आर्य समाज एवं अपनी संस्था का कोई कार्यक्रम न रखकर उक्त समारोह में अधिक से अधिक आर्य जनों के साथ टंकारा पधारने का कार्यक्रम बनायें। आपके आवास एवं भोजन की व्यवस्था टंकारा ट्रस्ट की ओर से होगी।

५. वेद प्रचार- आर्यसमाज ब्यावर, अजमेर, राजस्थान के ओजस्वी, मिशनरी भजनोपदेशक पं. अमरसिंह ने पूर्ण निष्ठा व कर्मठता से वैदिक धर्म प्रचार का अभियान सम्पूर्ण देश में चला रखा है। आपने ब्यावर शहर में अनेकों वैदिक संस्कार सम्पन्न कराने के साथ-साथ संगीतमय वैदिक प्रचार कार्यक्रम यथा- दयानगर, चम्पानगर, गणेशपुरा, साकेतनगर सहित राजस्थान के अजमेर, पीपाड़ शहर, जोधपुर, रामसर, नसीराबाद, डोहरिया, चापानेरी, माउन्ट आबू, कोटा, बून्दी, मध्यप्रदेश के नीमच, बड़नगर, देपालपुर, उज्जैन, जबलपुर, सीरौंज, लटेरी, कुखाई, विदिशा जिले; हरियाणा में सुरेटी, लेघा, दिल्ली तथा छत्तीसगढ़ सहित अनेकों स्थानों पर वैदिक धर्म प्रचार द्वारा लोगों में धर्म के प्रति भावनाएँ जागृत की है।

६. सामवेद पारायण यज्ञ- दयानन्द मठ, श्रद्धानन्द नगर (भतुहवाँ) के तत्त्वावधान में दि. १२ से १७ नवम्बर २०१३ तक छः दिवसीय सामवेद पारायण यज्ञ का आयोजन देवभूमि, ग्रा.पो. डमरापुर, थाना मानपुर, अंचल मैनाटांड, जि. पं. चम्पारण (बिहार) में किया जा रहा है। इस यज्ञ में आगंतुक विद्वत मण्डल के अन्तर्गत यज्ञ के ब्रह्मा भगवान चैतन्य मुनी (हिमाचल प्रदेश), पूज्य माता सत्यप्रिया (हिमाचल प्रदेश), पं. महेन्द्रपाल आर्य (दिल्ली), पुरोहित वृन्द में पं. रामायण शर्मा आर्य, पं. सुधीर आर्य, ब्र. नमन कुमार आर्य, ब्र. अग्निवेश आर्य तथा भजनोपदेशक में प. दयानन्द सत्यार्थी (समस्तीपुर) पधार रहे हैं।

७. विजयादशमी पर्व मनाया- आर्यसमाज हिरण मगरी, उदयपुर की ओर से दिनांक १३ अक्टूबर २०१३ को विजयादशमी पर्व हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। भंवरलाल आर्य ने स्वागत एवं डॉ. शारदा गुप्ता ने आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम का संचालन कवि भूपेन्द्र शर्मा ने किया।

८. वेद प्रचार सम्पन्न- आर्यसमाज सान्ताक्रुज़ (प.) मुम्बई द्वारा गुरुवार दि. १९ से २२ सितम्बर २०१३ तक आर्यसमाज सान्ताक्रुज के बृहद् सभागार में वेद प्रचार समारोह उत्साहपूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर प्रतिदिन सायं ६.३० से ९.३० बजे तक "चतुर्वेद शतक पारायण यज्ञ" तथा भजन, प्रवचन का आयोजन किया गया। यज्ञ के ब्रह्मा सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् प्रो. विनय विद्यालंकार जी (उत्तराखण्ड) थे। यज्ञ में वेदपाठी ब्रह्मचारी गुरुकुल वैदिक संस्कृत महाविद्यालय रामलिंग-येडशि तथा ब्राह्मणवृन्द पं. नामदेव आर्य, पं. विनोद कुमार शास्त्री, पं.

www.thearyasamaj.org

नरेन्द्र शास्त्री एवं पं. प्रभारंजन पाठक थे।

९. **शिविर सम्पन्न**- वेद मन्त्रों के उद्घोष के साथ विजयादशमी के शुभावसर पर विजयपर्व के रूप में गुरुकुल आमसेना, खरियार रोड, जि. नवापारा, ओड़िशा में ११ अक्टुबर को शिविर का शुभारम्भ माननीय विधायक नुआपड़ा श्री राजुभाई धोलकिया के करकमलों से उद्घाटन हुआ। प्रातःकाल ओड़िशा, छत्तीसगढ़ के नवयुवकों/छात्रों की भीड़ गुरुकुल परिसर में उपस्थित थी। इस शुभावसर पर जिला शिशु सुरक्षा अधिकारी श्रीमान् बलदेव रथ भी उपस्थित थे। पूज्यपाद् स्वामी धर्मानन्द जी ने आगन्तुक नौजवानों को आशीर्वाद प्रदान करते हुए अपना उद्बोधन दिया। गुरुकुल आश्रम के तत्त्वावधान में आर्यवीर दल ओड़िशा की ओर से लगभग २०० छात्रों को शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक उन्नति के गुर सिखाये गये।

१०. **वार्षिकोत्सव सम्पन्न**- आर्यसमाज पालिका कॉलोनी, भिवानी रोड, रोहतक का चतुर्थ वार्षिक उत्सव दिनांक ४ से ६ अक्टूबर २०१३ तक मनाया गया। यज्ञ के ब्रह्मा वैदिक विद्वान् आचार्य वेदमित्र जी थे। वेदपाठ गुरुकुल गौतम नगर के ब्रह्मचारियों द्वारा किया गया। उत्सव में वेद सम्मेलन, राष्ट्ररक्षा सम्मेलन, गोरक्षा सम्मेलन में आचार्य बलदेव जी अध्यक्ष सार्वदेशिक प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली, प्रो. ओमकुमार आर्य, महोपदेशक जगदीशचन्द्र वसु, सत्यवीर शास्त्री मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा, श्री सुभाष बत्रा पूर्व मन्त्री हरियाणा सरकार, महावीर धीर, शम्भुमित्र जी शास्त्री आदि अनेक विद्वानों ने वेद, राष्ट्र व गोमाता के बारे में विचार रखे। उत्सव में 'करौंथा काण्ड' के शहीदों की श्रद्धाञ्जलि सभा का भी आयोजन किया गया। बहन दयावती आर्या, गायक पवनजीत आर्य, संजय आर्य ने मधुर गीतों से लोगों को आनन्दित किया।

११. **श्रावणी पर्व मनाया**- आर्य समाज वेद मन्दिर, गोविन्द नगर, कानपुर, उ.प्र. के दिनांक २८ अगस्त से १ सितम्बर २०१३ तक आयोजित श्रावणी पर्व में इटावा से पधारे विद्वान् श्री राजदेव शास्त्री तथा श्री रामसेवक आर्य भजनोपदेशक, हमीरपुर द्वारा विभिन्न विषयों पर प्रकाश डाला गया।

कार्यक्रमों के दौरान प्रधान श्री अशोक कुमार पुरी, मन्त्री हरिवंश आर्य, श्री श्यामप्रकाश शास्त्री, श्री रामसेवक आर्य, श्री पी.सी. बत्रा, श्री शिवप्रसाद आर्य, श्री रामलखन आर्य, श्री रामबिहारी आर्य, श्री भगवती प्रसाद त्रिपाठी, श्री प्रियव्रत वानप्रस्थी, श्रीमती सरोज अवस्थी, संजीता सचान, सुमित्रा चौधरी, तपेश्वरी देवी तथा नगर की विभिन्न समाजों के गणमान्य अधिकारी एवं सदस्य विशेष रूप से उपस्थित रहे।

१२. **महोत्सव सम्पन्न**- आर्यसमाज रामपुरा, कोटा, राजस्थान द्वारा संचालित बाल भारती आर्य शिशु शाला एवं मातृ सेवा सदन बालिका विद्यालय में शरद पूर्णिमा महोत्सव बड़ी धूम धाम व उल्लास से मनाया गया। महोत्सव का शुभारम्भ देव यज्ञ से हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा पं. विरधीचन्द्र शास्त्री थे, यज्ञ के प्रमुख यजमान श्री इन्द्र कुमार सक्सेना एवं श्रीमती मृदुला सक्सेना थी। यज्ञ के पूर्णाहुति के पश्चात् प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् श्री शिवनारायण उपाध्याय जी ने शरद पूर्णिमा के दिन चन्द्रमा की किरणों का खीर पर पड़ने वाले प्रभावों की वैज्ञानिक ढंग से व्याख्या की।

१३. **आवश्यकता**- आर्यसमाज, महर्षि दयानन्द मार्ग (अचल मार्ग), अलीगढ़ हेतु युवा एवं योग्य दो आर्य पुरोहितों की तुरन्त आवश्यकता है। वेद-विद्वान् एवं आर्य संस्कृति के विचार वाले, जो वैदिक संस्कारों को कराने में पूर्ण दक्ष एवं सक्षम हों, वही तुरन्त सम्पर्क करें। आवेदन पत्र प्रेषित करें।

सम्पर्क- राजेन्द्र पथिक, चलभाष-०९४१२६७१५५४
आचार्य मित्रसेन आर्य, चलभाष-०९५५७४०८५६५

१४. **केन्द्र प्रारम्भ**- आर्यसमाज, महर्षि दयानन्द मार्ग (अचल मार्ग), अलीगढ़ में वैदिक विद्वान् आश्रय केन्द्र प्रारम्भ कर, भारतवर्ष में आर्यसमाज के इतिहास में एक नये अध्याय का सूत्रपात किया गया है। नवसम्वत्सर एवं 'आर्यसमाज' स्थापना-दिवस के उपलक्ष्य में दिनांक ११ अप्रैल को आयोजित समारोह में उपस्थित भारी आर्य-जन-समूह के मध्य अलीगढ़ आर्यसमाज द्वारा 'वैदिक-विद्वान् आश्रय केन्द्र' के प्रारम्भ किये जाने की घोषणा की गई, जिसका सभी ने करतल ध्वनि से स्वागत किया। उक्त केन्द्र में भारत के प्रत्येक क्षेत्र के सम्बन्धित वयोवृद्ध विद्वानों को आमन्त्रित किया गया है।

शोक सन्देश

१५. महर्षि दयानन्द गुरुकुल योगाश्रम, नरसिंहनाथ, पाईकमाल, जिला बरगढ़, ओडिशा के संस्थापक स्वामी ज्ञानानन्द सरस्वती का शरीर गत २८/१०/२०१३ को पंचतत्त्व में विलीन हो गया। जिनका अन्तिम संस्कार २९/१०/२०१३ को पूर्ण वैदिक रीति के अनुसार आचार्य बुद्धदेव, आचार्य स्वामी व्रतानन्द सरस्वती, आमसेना, आचार्य बृहस्पति नुआपाली, आचार्य सुदर्शनदेव हरिपुर, ओडिशा प्रान्त के अनेक आर्यजनों एवं अनेक आर्य संन्यासियों की उपस्थिति में किया गया।

परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

www.thearyasamaj.org

शिविरार्थियों का
कक्षा व
ध्यान करते
हुए का चित्र।

योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर) २० से २७ अक्टूबर २०१३, ऋषि उद्यान, अजमेर
अध्यापकगण व शिविरार्थीगण का सामूहिक चित्र।

www.thearyasamaj.org

आर जे/ए जे/80/2013-2014 तक प्रेषण : १५ नवम्बर, २०१३ RNI. NO. ३९५९/५९

योग-साधना शिविर (प्राथमिक स्तर)

२० से २७ अक्टूबर २०१३

डॉ. धर्मवीर

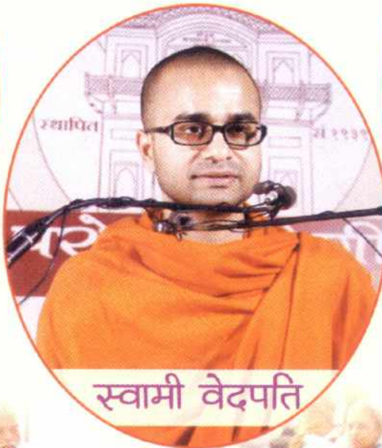

स्वामी वेदपति

आचार्य सत्येन्द्र

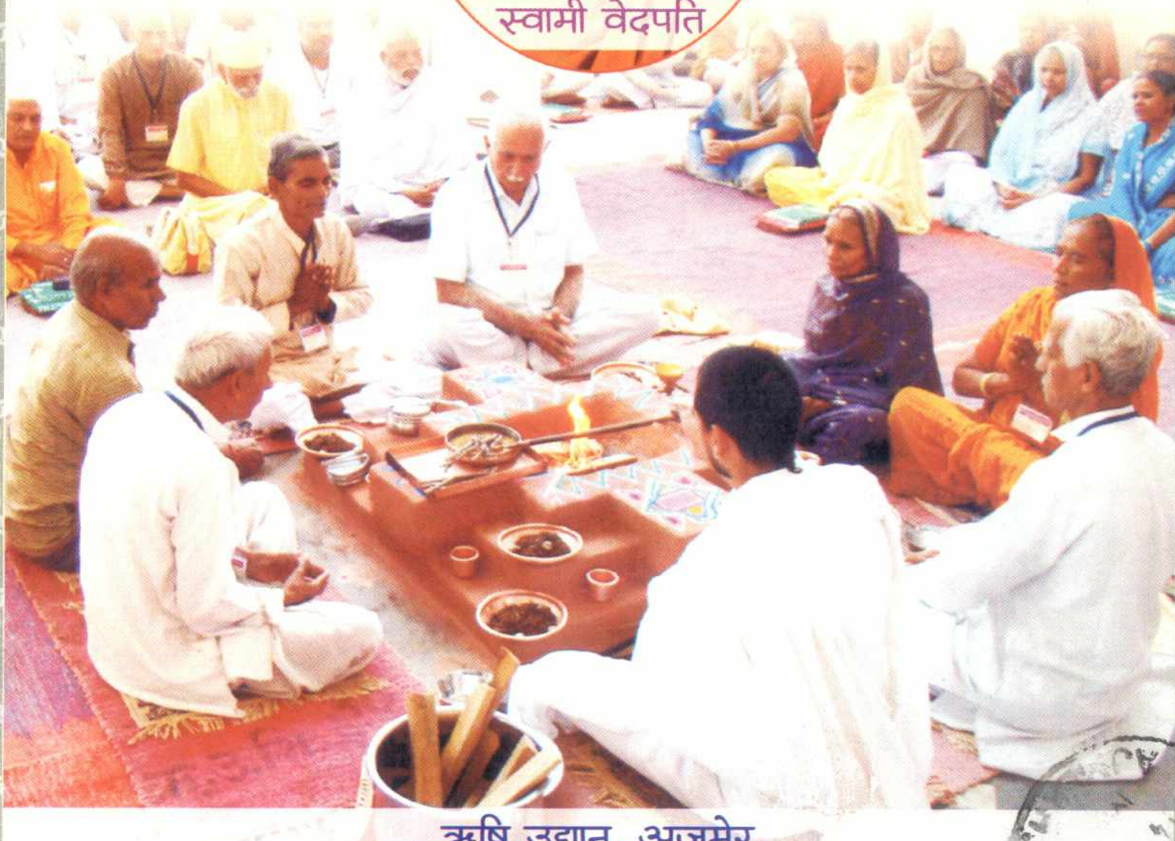

ऋषि उद्यान, अजमेर

प्रेषक:
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर
(राजस्थान) - ३०५००१